संवादसेतु

मीडिया का आत्मावलोकन

अंक-31 | मार्च 2026 | नई दिल्ली

हिंदी पत्रकारिता के 200 वसंत

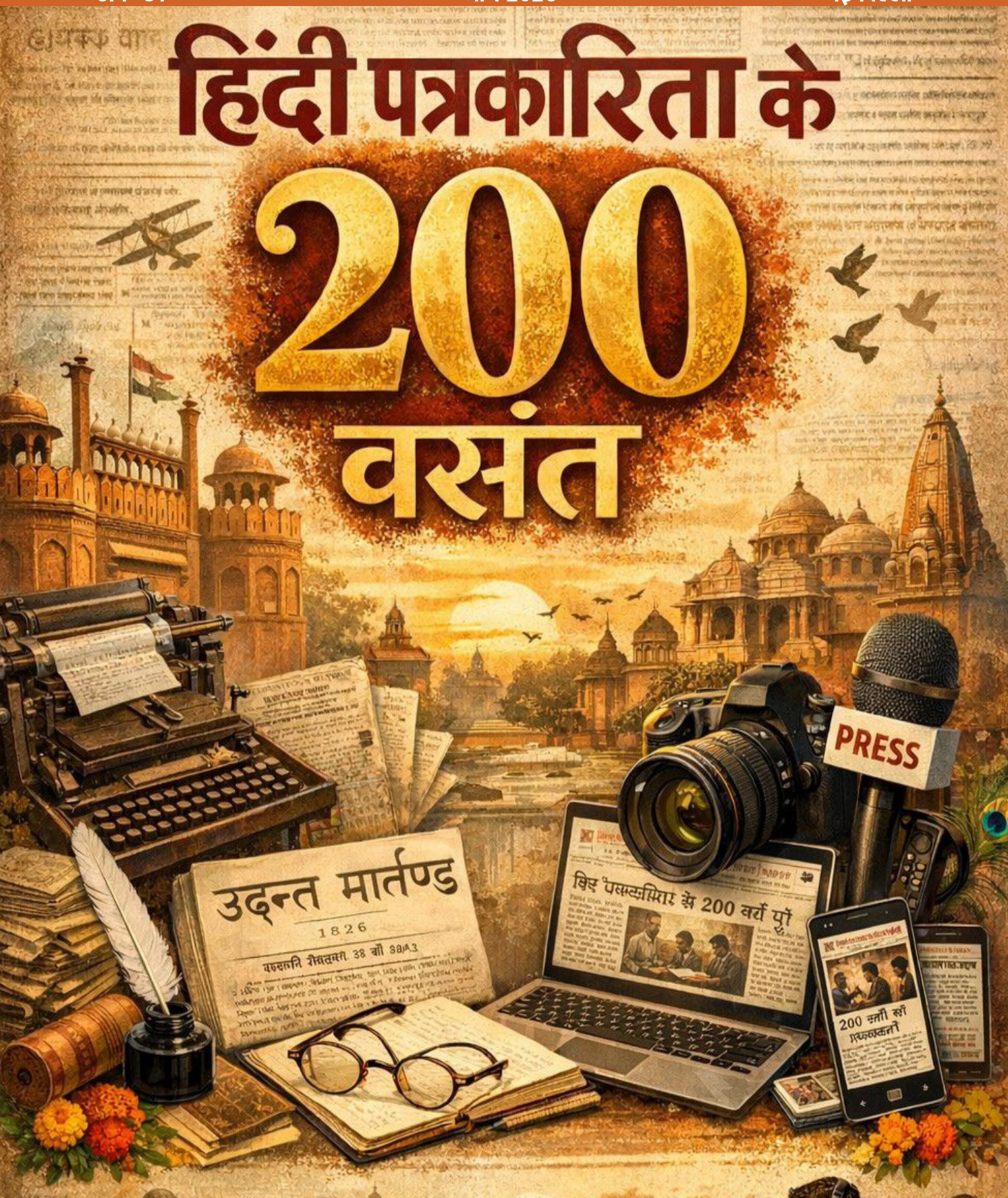

संपादक
आशुतोष भटनागर

कार्यकारी - संपादक
डॉ. जयप्रकाश सिंह

उप-संपादक
डॉ. चंदन आनंद
डॉ. रविन्द्र सिंह भड़वाल

डिजाइनिंग
केशव ओझा

ई-मेल
samvadsetu2011@gmail.com

फेसबुक पेज
@samvadsetu2011

अनुरोध

संवादसेतु की इस पहल पर आपकी टिप्पणी एवं सुझावों का स्वागत है। अपनी टिप्पणी आप उपरोक्त ई-मेल पर भेज सकते हैं।

संवादसेतु मीडिया सरोकारों से जुड़े पत्रकारों की रचनात्मक पहल है। संवादसेतु अपने लेखकों तथा विषय की स्पष्टता के लिए इंटरनेट से ली गई सामग्री के रचनाकारों का भी आभार व्यक्त करता है। पत्रिका के प्रकाशन में संलग्न सभी लोगों के पद अवैतनिक हैं।

संपादकीय
पृष्ठ 3

आवरण कथा
अभिव्यक्ति में वासंतिक वृत्ति
पृष्ठ 4-5

प्रसंगवश
भारतीय पत्रकारिता के 200 वर्ष और मील के तीन पत्थर
पृष्ठ 6-8

परिप्रेक्ष्य
घोटाले और भ्रष्टाचार, मीडिया के बड़े प्रहार!
पृष्ठ 9-10

कला संवाद
पत्रकारिता में कला के वासंती रंग
पृष्ठ 11

एआई समिट
समिट में मंथन: मीडिया में AI का प्रयोग और विश्वसनीयता की चुनौती
पृष्ठ 12-13

वसंत का स्वर
मन वसंत का राग
पृष्ठ 14

प्रयास
जोहो: संवाद का स्वदेशी सेतु बनाने का प्रयास'
पृष्ठ 15

संदर्भ
मिशन, परमिशन, प्रोफेशनलिज्म से कमीशन तक हिंदी पत्रकारिता के 200 वर्ष
पृष्ठ 16-17

घटनाक्रम
पृष्ठ 18-20

संपादकीय

भारत में भारतीय भाषा में पत्रकारिता का प्रारंभ कोलकाता से प्रकाशित 'उदन्त मार्तण्ड' से माना जाता है। इससे पहले ही हिक्की गजट जैसे अंग्रेजी भाषा के पत्र भारत में प्रकाशित होने लगे थे । दोनों में बड़ा अंतर था। अंग्रेजों द्वारा प्रकाशित अखबार जहां बाजार की गतिविधियों तथा भारत में रह रहे अंग्रेजों की विलासिता के रोचक किस्सों से भरे रहते थे वहीं भारतीय भाषाओं के समाचार पत्र समाज में राष्ट्रीयता के जागरण में सन्नद्ध थे।

इस वर्ष उदन्त मार्तण्ड के प्रकाशन प्रारंभ होने के दो सौ साल पूरे हो रहे हैं। द्विशताब्दी सम्पूर्ति के अवसर पर संवादसेतु टोली ने प्रस्तुत अंक को भारतीय भाषाओं की पत्रकारिता की इस यात्रा को समर्पित करने का निश्चय किया है। पत्रकारिता इस दौरान अनेक खट्टे-मीठे ही नहीं, कड़वे और कसैले अनुभवों से भी गुजरी। सर उठाकर जीने के लिये सब कुछ निछावर करने और निहित स्वार्थों के लिये असत्य के आगे घुटने टेक देने की घटनाओं से संगुम्फित यह दो शताब्दियों की यात्रा है।

निस्संदेह, पतझड़ से गुजरना वसंत को पा लेने की पूर्व शर्त है। पत्रकारिता को भी दो सौ वसंत पूरे करने के लिये उतनी ही बार पतझड़ का सामना करना पड़ा। दमन की आंधियों और प्रतिबंधों के झंझावात से गुजर कर भारतीय भाषा की पत्रकारिता ने मूल्यों की कसौटी पर अपने-आप को खरा साबित किया है। यह परीक्षा स्वाधीनता से पहले देनी पड़ी और स्वाधीनता के बाद भी। किन्तु हर पीढ़ी में कुछ लोग सामने आये जिन्होंने स्वतंत्र पत्रकारिता की मशाल को बुझने नहीं दिया।

विगत दो शताब्दियों में पत्रकारिता जगत में भी बहुत कुछ बदला है। उद्देश्य बदले, दिशा बदली, दृष्टि बदली, संसाधन बढ़े, पाठक बढ़े, सूचना के संसाधन बढ़े, समाचार पत्र सम्पादक के हाथ से निकल कर संस्थानों के हाथ में पहुंचे और उसे भी पीछे छोड़ते हुए आज क़ॉर्पोरेट में बदल गये हैं। उनकी प्रतिबद्धताएं भी बदली हैं। अब उनकी संपादकीय नीति संपादक नहीं तय करता, उसके मालिक समूह के हितों के अनुसार निश्चित होती है। संपादकीय नीति से संपादक का सहमत होना अब आवश्यक नहीं है। असहमति की स्थिति में उसे कभी भी बाहर का दरवाजा दिखाया जा सकता है।

अधिकांश लोगों को लगता है कि गत दशकों में संपादक संस्था का क्षरण हुआ है। लेकिन यह स्मरण रखना चाहिये कि संपादक और पत्रकार भी उसी समाज से आते हैं, उसी समाज का हिस्सा होते हैं, जिसके लिये वे पत्रकारिता कर रहे होते हैं। अगर यह क्षरण है तो यह समाज का उन मूल्यों में आस्था के क्षरण का उदाहरण है जिसका प्रतिनिधित्व यह पत्रकार करते हैं। जब समाज का एक हिस्सा भ्रष्ट व अनैतिक तंत्र का हिस्सा हो और दूसरा उसका पीड़ित, तो मुट्ठी भर पत्रकारों के कंधों पर धारा के विपरीत नैतिकता का जुआ रख कर उनसे सारी आशाएं रखना निराश ही करेगा।

लेकिन निराशा भरे इस वातावरण में भी उदन्त मार्तण्ड और उसकी परम्परा की पत्रकारिता प्रकाश की किरण बन कर फूटती है और नयी पीढ़ी के पत्रकारों को प्रेरित करती है। निराशा भरी अनगिनत कहानियों के बीच हर पीढ़ी में कुछ पत्रकार ऐसे अवश्य निकलते हैं जो आगे बढ़ कर मूल्याधारित पत्रकारिता की मशाल को थाम लेते हैं। स्वनामधन्य पत्रकारों की एक पूरी श्रृंखला तो हमारे समक्ष है ही, उनसे कहीं अधिक संख्या उन अनाम पत्रकारों की है जिन्होंने स्खलन के इस पतझड़ को अपने तेज और आत्मबल से सींच कर पत्रकारिता का श्रृंगार किया है, ताकि तथ्य और सत्य की वासंती सुवास फैल सके।

हार्दिक शुभकामना सहित,

आशुतोष
संपादक

अभिव्यक्ति में वासंतिक वृत्ति

डॉ. जयप्रकाश सिंह

हिन्दी पत्रकारिता का किसलय मिट्टी से अधिक पत्थरों पर फूटा है। 'वर्नाकुलर' मानने की औपनिवेशिक दृष्टि और 'स्टील फ्रेम' की कठोर चारदीवारी के बीच काम करने की बाध्यता ने हिन्दी पत्रकारिता को एक उर्वर जमीन कभी उपलब्ध नहीं होने दी। फिर भी, प्रत्येक परिस्थिति में नया रचते रहने की अपनी वासंतिक प्रवृत्ति और पतझड़ के बाद कोंपल आने के अपने वासंतिक विश्वास के कारण हिन्दी पत्रकारिता सभी विरोधों-अवरोधों को पार करती गई, करती जा रही है। हिन्दी पत्रकारिता का संदेश भारतीयता का संदेश है, वासंतिक प्रवृत्ति इसका स्थायी भाव है।

परिस्थितियों का रोना रोने की बजाय किसी भी दी हुई स्थिति में सृजन करते जाना वसंत का लक्षण है और हिन्दी पत्रकारिता इस वासंतिक प्रवृत्ति का सशक्त उदाहरण है। इसी कारण, विभिन्न अवरोधों, दबावों और ग्रंथियों को साहस और सृजनात्मकता के साथ पार करने की यह जीवंत कहानी बन गई है। सृजनात्मकता और साहस के सुमेल के कारण हिन्दी पत्रकारिता की अब तक की यात्रा को 'सृजनात्मक सत्याग्रह' की यात्रा कहा जा सकता है।

यह अनायास नहीं है कि रामचंद्र शुक्ल को देश की दुर्दशा की तरफ ध्यान आकृष्ट करने के लिए 'वसंत' ही सबसे सटीक प्रतीक लगा। उनके लिए वसंत अलगाव में उपजा कल्पना नहीं, बल्कि परिवेश के प्रति संवेदनशीलता से उपजा सृजनकर्म था। अपनी इसी मान्यता के कारण वह 'सरस्वती' पत्रिका में 'वसंत' पर कविता लिखकर वृक्षों और पुष्पों को असंवेदनशीलता और अलगाव के लिए धिक्कारते हैं-

'करि सिर उच्च कदम्ब रह्यो तू व्यर्थ निहारी,
नहिं गोपिका कृष्ण कहीं तुव छांव बिहारी।
रे, रे निलज सरोज! अजहुं निकसत लखि भानुहिं,
देश-दुर्दशा जनित दुख चित नेकु न आनहिं।'

वसंत को संवेदनशील सृजनकर्म के रूप में स्वीकार करने की यह मान्यता बाद में हिन्दी पत्रकारिता का स्थायी भाव बन गया। और इसी कारण, विरोधों और अवरोधों को पार करने के लिए हिन्दी पत्रकारिता ने कल्पनाशीलता के जो मानक गढ़े, उनसे परिचय विश्वसनीयता का संकट झेल रहे संचारकर्म को नई संजीवनी दे सकती है।

यहां पर यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि अपने प्रारम्भिक दौर में हिन्दी पत्रकारिता और आधुनिक हिन्दी साहित्य के बीच बहुत स्पष्ट विभाजन नहीं दिखता। आधुनिक हिन्दी के साहित्यकार, हिन्दी पत्रकारिता के भी सशक्त हस्ताक्षर रहे। वे राष्ट्रीय चेतना को अभिव्यक्त करने के लिए साहित्य और पत्रकारिता का समान रूप से उपयोग कर रहे थे, इसलिए अभिव्यक्ति की इस वासंतीय शैली को सम्पूर्णता में समझने के लिए साहित्य और पत्रकारिता दोनों में इस शैली के विभिन्न आयामों को समझना होगा।

अतीत: असंतोष को अभिव्यक्त करने का माध्यम

हिन्दी पत्रकारिता के शुरुआती संवाहको ने बहुत ही सृजनात्मक तरीके से उन बिम्बों, मुहावरों और प्रतीकों का इस्तेमाल किया, जो औपनिवेशिक कानूनों के दायरे में आए बिन राष्ट्रबोध और स्वतंत्रता का संदेश जनमानस तक पहुंचा पाएं। अप्रत्यक्ष रूप से अंग्रेजी शासन व्यवस्था के प्रति असंतोष के बीजारोपण तो इनमें समाहित रहता ही था। यह कार्य केवल अभिधा में नहीं हो सकता था, इसके लिए लक्षणा और व्यंजना की आवश्यकता थी। लक्षणा और व्यंजना भी ऐसी, जिससे भारतीय मानस भलीभांति परिचित हो।

अतीत का गुणगान अभिव्यक्ति का एक ऐसा ही विषय था, जिसके माध्यम से सभी वांछित संदेश जनमानस तक पहुंचाए जा सकते थे। इसीलिए, भारतीय साहित्य और पत्रकारिता में अतीत के प्रति जो आकर्षण दिखता है, वह अनायास नहीं है। यह भारत और भारतीयता को अभिव्यक्त करने का एक सुचिंतित तरीका था। भारतेन्दु हरिश्चंद्र की इस अभिव्यक्ति में कि -

'कहां गए विक्रम, भोज, राम, बलि, कर्ण, युधिष्ठिर
चंद्रगुप्त चाणक्य कहां नासै करिकै धिर।'

में औपनिवेशिक शासन को उखाड़ फेंकने का संदेश अंतर्निहित होता है। यह भारतीय पौरुष और वीरता को ललकारने का एक अप्रत्यक्ष तरीका था। इसीतरह जब वह लिखते हैं कि-

'बहुदिन बीते रामप्रभु खोये आपनो देस।
खोवत हैं, अब बैठ के भाषा, भोजन, भेस।।'

तो इसमें अतीत के गौरवगान से अधिक वर्तमान में अन्यायी शासनव्यवस्था के प्रति उठ खड़े होने का क्षोभ अधिक झलकता है। बालमुकुंद गुप्त की कविता में भी ठीक इसी तरह के भाव देखे जा सकते हैं। पहले वह अपने देश की वर्तमान दुर्दशा भगवान राम के समक्ष रखते हैं-

'इन दुखियान आखियान मंह बसै आप को राज
जहाँ मारी को डर नहीं, अरु अकाल को त्रास
जहां करै सुख-संपदा बारह मास प्रकाश
जहां प्रबल को बल नहीं, अरु निरबल की हाय
एकबार सो दृश्य पुनः आंखिन देहु दिखाय।'

और उसके बाद रामराज्य की आदर्श शासन व्यवस्था का स्मरण करते हुए उसे फिर से देखने की इच्छा अभिव्यक्त करते हैं-

'हाय पंचनद!हा पानीपत! अजहुं रहे तुम धरनि बिराजत।।
हाय चित्तौर, निलज तू भारी ! अजहुं खरो भारतहिं मंझारी।।'

अभिव्यक्ति की इस पूरी प्रक्रिया में औपनिवेशिक शासन का विरोध कहीं पर भी प्रत्यक्षतः दिखता नहीं, लेकिन उसके प्रति असंतोष का भाव, उसे बदलने की इच्छा इस सम्पूर्ण अभिव्यक्ति के केन्द्र में है।

सोहनलाल द्विवेदी चांद पत्रिका में प्रकाशित कविता 'मेवाड़ के प्रति' में अतीत का स्मरण भर नहीं करते, वह फिर से उस धर्म-राष्ट्ररक्षक प्रवृत्ति को उठ खड़े होने की आकांक्षा को अभिव्यक्ति भी देते हैं-

'ऐ रण मतवाले जाग-जाग! जौहर व्रत वाले जाग-जाग!
ऐ स्वतंत्रता की आग-जाग! ऐ देश के मुकुट मणि-जाग!'

इस तरह शुरुआती हिन्दी पत्रकारिता में अतीत का स्मरण वर्तमान की दुर्दशा के प्रति ध्यान आकृष्ट करने का प्रभावी माध्यम बन गया। आज भले ही कुछ लोग यह कहें कि अतीत के स्मरण से वर्तमान की समस्याओं को बदलने में मदद नहीं मिलती, लेकिन हिन्दी पत्रकारिता और उसकी संदेश प्रणाली तो यही बताती है कि भारत में अतीत का स्मरण वर्तमान की विसंगतियों को बदलकर उज्जवल भविष्य की नींव रखने के लिए एक प्रेरणा का कार्य करता रहा है।

अभिधा, लक्षणा, व्यंजना और कुछ मुकरियां

हिन्दी पत्रकारिता ने अपने आरम्भिक काल से ही वांछित संदेशों को अप्रत्यक्ष तरीके से धरातल स्तर तक पहुंचाने की अद्भुत अभिव्यक्तिशैली विकसित कर ली थी। इसका सबसे सबल उदाहरण भारतेन्दु हरिश्चंद्र की मुकरियां है। इन मुकरियों में हास्य के पुट के साथ शासन और व्यवस्था पर जिस तरह की चोट की गई है, वह बेजोड़ है। उनकी मुकरियों की सबसे बड़ी खूबी यह है कि वह पूरी व्यवस्था की विसंगतियों पर कटाक्ष करती है, और औपनिवेशिक शासन के प्रति क्षोभ उसमें सहज ही देखा जा सकता है। उदाहरण के लिए वह ग्रेजुएट बेरोजगारों के साथ अंग्रेजी पर तंज कसते हैं और यह यात्रा अंग्रेजों पर तंज कसने की साथ रुकती है-

'भीतर भीतर सब रस चूसै।
हंसि हंसि कै तन मन धन मूसै।।
जाहिर बातन में अति तेज।
क्यों सखि सज्जन नहिं अंगरेज।।'

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का रोना रोने वाले लोगों पर भी यह मुकरियां एक कटाक्ष बन जाती हैं। और यह बताती है कि संकट अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता से अधिक सर्जनात्मकता और प्रतिबद्धता का है। यदि सर्जनात्मकता हो, समयबोध हो तो संदेश अपने पाठकों और श्रोताओं तक किसी न किसी रूप में पहुंच ही जाते हैं।

इस तरह, हिन्दी पत्रकारिता के सामने अपने अस्तित्व को बचाए रखते हुए व्यवस्था की हेय दृष्टि को नजरंदाज कर देश और सच के साथ खड़े रहने की एक जटिल चुनौती थी। हालात भी ऐसे थे कि इस चुनौती का सामना करने का पारितोषिक यही था कि जेल जाने से लेकर समाचार पत्र एवं पत्रिका पर पाबंदी भी लग सकती थी। ऐसे दौर में भारतेंदु हरिश्चंद्र समेत कई संपादकों ने संबल प्रदान किया। वह अपने कलात्मक लेखन से सभी के लिए साहस और प्रेरणा का केंद्र बने। हिन्दी पत्रकारिता ने इस चुनौती का बखूबी सामना किया। यह कार्य संसाधनों से नहीं, बल्कि साहस और सर्जनात्मकता से किया गया। किसी भी परिस्थिति में डटे रहना और स्वयं को अभिव्यक्त करने के नए मुहावरे और शैलियों को खोज लेना हिन्दी पत्रकारिता की सबसे बड़ी थाती है। अभिव्यक्ति में यह नव-पल्लवन की प्रवृत्ति हिन्दी पत्रकारिता की सबसे विशिष्ट पहचान भी बन गई है। ●

भारतीय पत्रकारिता के 200 वर्ष और मील के तीन पत्थर

सूर्यप्रकाश

भारत में पत्रकारिता का प्रारंभ उस दौर में हुआ था, जब देश में प्रतिरोध की आवाजें मुखर थीं। स्वतंत्रता लक्ष्य थी और उसके लिए समस्त राष्ट्र हर मोल चुकाने को तैयार था। ऐसे दौर में पत्रकारिता का स्वर इन स्वरों को और मुखर कर रहा था। यहां तक कि अंग्रेजों को भारतीय पत्रकारिता का यह स्वर ऐसा चुभने लगा था कि पत्रकारों को उन्होंने कड़ी यातनाएं दीं। कई संपादक जेल गए तो किसी को भूमिगत रहने के लिए विवश होना पड़ा। ऐसे अखबारों में हिंदी के पत्र शामिल थे तो वहीं उर्दू के अखबारों ने भी बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। यही कारण था कि स्वराज नाम के उर्दू अखबार के 6 संपादकों को कुल मिलाकर 94 साल की जेल की सजा सुनाई गई थी। अपराध बस इतना था कि वे स्वतंत्रता की अलख जगाने के लिए लिख रहे थे। इसके अलावा 'सरस्वती' और 'कल्याण' जैसे पत्र और पत्रिकाओं ने भी समाज को स्वराज्य के लिए जागृत किया तो वहीं साहित्यिक और आध्यात्मिक चेतना भी जागृत की।

'उम्र ढाई साल, कुल प्रकाशित अंक 75, कुल सम्पादक 8, इनमें से 6 संपादकों को कुल मिलाकर सजा और देश निकाला- 94 वर्ष। किसी समाचारपत्र को अभिव्यक्ति के स्वातंत्र्य की इतनी बड़ी कीमत चुकानी पड़ी होगी?'

भारतीय पत्रकारिता का विस्तृत इतिहास संकलित करने वाले विजयदत्त श्रीधर स्वराज के संबंध में लिखते हैं, 'उम्र ढाई साल, कुल प्रकाशित अंक 75, कुल सम्पादक 8, इनमें से 6 संपादकों को कुल मिलाकर सजा और देश निकाला- 94 वर्ष। किसी समाचारपत्र को अभिव्यक्ति के स्वातंत्र्य की इतनी बड़ी कीमत चुकानी पड़ी होगी?' किसी अखबार के सम्पादक की पदवी कांटों का ऐसा ताज सिद्ध हुई। सारी दुनिया की पत्रकारिता के इतिहास में ऐसा दूसरा प्रसंग दुर्लभ ही नहीं, कदाचित असंभव है। लेकिन संघर्षों की यह सत्यकथा 1907 में इलाहाबाद से प्रकाशित उर्दू साप्ताहिक 'स्वराज' की आपबीती है। इसके आदि सम्पादक थे- शांति नारायण भटनागर। भारतमाता सोसायटी इलाहाबाद ने पत्र का प्रकाशन किया था। पृष्ठ संख्या आठ और वार्षिक शुल्क 4 रुपये था। स्वराज का ध्येय वाक्य था- 'हिन्दुस्तान के हम हैं, हिन्दुस्तान हमारा है।'

बंगाल विभाजन को लेकर समूचे राष्ट्र में अंग्रेजों के विरुद्ध गुस्सा था और उसकी प्रतिध्वनि उस दौरान स्वराज में भी खूब सुनाई दी। इसी स्वर की सजा उसके संपादकों को लगातार मिलती रही, लेकिन पत्रकारों का यह जज्बा ही था और उनकी कलम का यह वीरोचित भाव था कि एक के बाद एक 6 संपादकों को जेल हुई, किंतु वे अपने पथ से डिगे नहीं। उस दौरान बदायूं के अखबार 'जू उल करनीन' ने स्वराज से जुड़े मुकदमे का समाचार प्रकाशित किया था। अखबार ने लिखा था, 'स्वराज इलाहाबाद का मुकदमा खत्म हो गया। मिस्टर वालिश ने सरकार की तरफ से और मिस्टर टंडन ने मुलजिम की तरफ से पैरवी की। सरकारी वकील का कहना था कि मुलजिम पर लेखों के कारण दफा 124A के तहत मुकदमा लगा है। ये लेख 23 और 30 मई को अखबार में प्रकाशित हुए थे। 29 फरवरी को भी अकाल और निदान शीर्षक से एक लेख प्रकाशित किया था, जिस पर चेतावनी दी गई थी, लेकिन उसकी कुछ परवाह नहीं की। आखिर 8 जून को मुलजिम को 2 साल की सख्त कैद और 500 रुपये जुर्माने की सजा दी गई। यदि जुर्माना नहीं दिया तो 9 माह की कैद और होगी।'

6 संपादकों को 94 साल की सजा

स्वराज के संपादकों की जेल का यह सिलसिला जो जून 1908 में शुरू हुआ था, वह लंबा चला। डेढ़ साल के भीतर ही इस समाचार पत्र के 8 में से 6 संपादकों को कुल 94 साल की सजा दी गई और अंतत: अखबार का गला ही घोट दिया गया। शांतिनारायण के बाद रामदास ने संपादक का दायित्व संभाला था। वह ठीक प्रकार से काम शुरू नहीं कर पाए थे कि भटनागर को मिली सजा के तहत जुर्माने की वसूली के लिए स्वराज प्रेस की ही नीलामी कर दी गई। इसके पश्चात नई प्रेस स्थापित की गई और होतीलाल वर्मा ने संपादन का जिम्मा संभाला। वह भी कुछ अंक ही प्रकाशित कर पाए थे कि 10 साल की सजा उन्हें भी मिल गई। आज भले ही पत्रकारिता एक पेशा बन गया है, लेकिन स्वराज के संपादकों के लिए यह ऐसा मिशन था, जिसमें पारितोषिक जेल जाना ही था। दो संपादकों के जेल जाने के बाद अखबार ने एडिटर की भर्ती के लिए जो विज्ञापन निकाला था, वह आज भी उल्लेखनीय है।

संपादक का वेतन तय हुआ- जेल की रोटी

अखबार ने संपादक हेतु विज्ञापन निकाला था, 'एक जौ की रोटी और एक प्याला पानी, यह वेतन है। स्वराज इलाहाबाद के वास्ते एक संपादक की आवश्यकता है। यह वह अखबार है, जिसके दो संपादक विद्रोही लेखों की मुहब्बत में गिरफ्तार हो चुके हैं। अब तीसरे संपादक के लिए जो इश्तिहार दिया जाता है, उसके लिए वेतन यह है कि जेलखाने में ऐशोआराम से रहकर जौ की रोटी और एक प्याला पानी को तरजीह देनी होगी।' उल्लेखनीय तथ्य यह है कि ऐसे विज्ञापन के बाद भी स्वराज के लिए संपादकों की कमी ना रही। एक संपादक जेल जा रहा था तो दूसरा अखबार के संपादन की कमान सिर पर कफन बांधकर संभाले था। तीसरे संपादक बाबू हरिदास को 11 अंकों के बाद ही 21 साल की सजा दे दी गई। इसके बाद लाहौर

से 'भारतमाता' अखबार निकाल रहे मुंशी रामसेवक ने इसके संपादन की जिम्मेदारी संभाली, लेकिन उन्हें किसी भी अंक के प्रकाशन से पहले ही गिरफ्तार कर लिया गया। इस पर जिला दंडाधिकारी मैकनारे ने कटाक्ष किया था- अब स्वराज कौन निकालेगा? किंतु अंग्रेज अधिकारी यहां चूक कर गए और वह भारतीय पत्रकारिता के जज्बे को समझ नहीं सके। इसके बाद देहरादून के नंदगोपाल चोपड़ा आगे आए, लेकिन 12 अंकों के प्रकाशन के बाद उन्हें 30 वर्ष की सजा सुनाई गई। उनके बाद लद्धाराम कपूर अखबार के संपादक बने, लेकिन उन्हें भी 30 साल की सजा हुई। अखबार के आखिरी संपादक पंडित अमीरचंद बंबवाल को भी एक साल की सजा सुनाई गई थी। उनकी गिरफ्तारी के बाद स्वराज बंद हो गया और स्वतंत्रता के लिए जगी पत्रकारिता की अलख असमय ही बुझ गई।

इसी समय में महावीर प्रसाद द्विवेदी की हिंदी मासिक पत्रिका 'सरस्वती' ने भी अपना योगदान दिया। सरस्वती ने भारतीय पत्रकारिता में खड़ी बोली हिंदी के मानकीकरण में योगदान दिया तो वहीं मैथिलीशरण गुप्त जैसे दिग्गज साहित्यकार भी यहीं से निकले। भारतीय पत्रकारिता में क्रांतिकारी योगदान देने वाले गणेश शंकर विद्यार्थी भी इसका हिस्सा रहे थे और फिर बाद में उन्होंने जब उर्दू दैनिक 'प्रताप' का संपादन शुरू किया तो उसका ध्येय वाक्य मैथिली शरण गुप्त की कलम से ही निकला था। इस प्रकार सरस्वती ने हिंदी साहित्य और पत्रकारिता को कई महनीय हस्तियां प्रदान कीं। इनमें जयशंकर प्रसाद, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, माखनलाल चतुर्वेदी, बालकृष्ण शर्मा नवीन, महादेवी वर्मा, सुमित्रानंदन पंत, रामनरेश त्रिपाठी और रामधारी सिंह दिनकर आदि शामिल थे। सरस्वती की इस बात के लिए सराहना आज भी की जाती है कि उसने हिंदी भाषा को एक मानक स्वरूप प्रदान करने में अहम भूमिका अदा की।

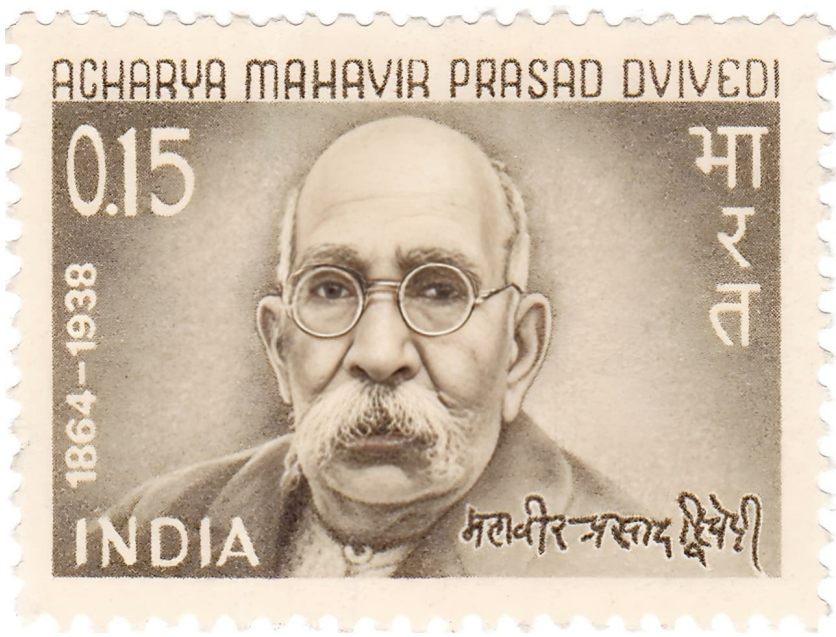

इस पत्रिका से जुड़ने वाले महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 18 सालों तक संपादन किया। महावीर प्रसाद द्विवेदी के संपादकत्व और सरस्वती में छपने वाले मानक लेखों का ही कमाल था कि 1900 से 1920 के दौर को महावीर द्विवेदी युग ही कहा जाता है। इस पत्रिका के संबंध में राहुल सांकृत्यायन ने लिखा था, 'किसी एक भाषा के बारे में किसी एक व्यक्ति (महावीर प्रसाद द्विवेदी) और एक पत्रिका (सरस्वती) ने यदि सबसे अधिक योगदान दिया है तो वह इन दोनों ने दिया है।' इस पत्रिका के प्रकाशक चिंतामणि घोष खुद हिंदी भाषी नहीं थे किंतु राष्ट्रभाषा के प्रति उनका योगदान ऐसा था कि महावीर प्रसाद द्विवेदी 18 सालों तक संपादन करते रहे। यही नहीं चिंतामणि घोष ने तय किया कि सेवानिवृत्ति के बाद भी महावीर जी को हर महीने 50 रुपये की मासिक पेंशन मिलती रहेगी। यह 1920 के उस दौर में बड़ी रकम थी। आधुनिक हिंदी की पहली कहानी इंदुमती का प्रकाशन इसी पत्रिका में हुआ तो वहीं वृंदावन लाल वर्मा की पहली कहानी भी इसी पत्रिका में 1907 में प्रकाशित हुई थी।

सरस्वती की यात्रा में महावीर प्रसाद द्विवेदी के बाद पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी जुड़े और फिर देवीदत्त शुक्ल एवं श्रीनारायण चतुर्वेदी जुड़े। यहां यह उल्लेखनीय है कि यदि चिंतामणि घोष जैसे उदार व्यक्ति पत्रिका के प्रकाशक थे तो वहीं श्रीनारायण चतुर्वेदी जैसे साहित्य और पत्रकारिता के उपासक व्यक्तित्व इसके 20 सालों तक संपादक रहे। आजीविका किसी भी व्यक्ति के लिए महत्वपूर्ण रही है, किंतु श्रीनारायण चतुर्वेदी ने बिना किसी वेतन के 1955 से 1975 तक सरस्वती का संपादन किया। दुर्भाग्य से सरस्वती पत्रिका शतायु नहीं हो सकी, लेकिन उसकी करीब 8 दशकों की यात्रा में 108 कवि, 60 कहानीकार और 100 अन्य लेखक पत्रिका से जुड़े। सरस्वती पत्रिका भारतीय पत्रकारिता के इतिहास में एक मील का पत्थर रही है और आज भी जब मानक पत्रकारिता की बात होती है तो महावीर प्रसाद द्विवेदी की सरस्वती और फिर उनके बाद के संपादकों का स्मरण उल्लेखनीय होता है।

भारत में भाषायी पत्रकारिता के 200 वर्षों के इतिहास में कई ऐसे समाचार पत्र और पत्रिकाएं हुई हैं, जिन्होंने खूब नाम कमाया। आज अखबारों, पत्रिकाओं और चैनलों की लोकप्रियता को मापने के लिए रीडरशिप सर्वे और टीआरपी जैसे पैमाने चलते हैं। इनके आधार पर मुख्यधारा की मीडिया की रेटिंग तय होती रही है, लेकिन गीता प्रेस का कल्याण समानांतर पत्रकारिता में लोकप्रियता का एक अप्रतिम उदाहरण है। भले ही मीडिया की चकाचौंध और पाठक वर्ग के आधार की चर्चा में कभी कल्याण का जिक्र ना होता हो, लेकिन जिस तरह दशकों से उसने भारत में आध्यात्मिकता और चेतना की एक लहर समाज में जागृत की है, उसका उल्लेख महत्वपूर्ण हो

जाता है। घर-घर में भारतीय मूल्य पहुंचाने, सरल और सरस हिंदी में कहानी, किस्से, पौराणिक कथाओं और बड़े जानकारों के लेखों के माध्यम से इस पत्रिका ने समाज के 'कल्याण' को मूल में रखते हुए अपने नाम को सार्थक किया है। आमतौर पर कुछ हजार प्रतियां ही बेच पाने वाले अखबार और पत्रिकाएं भी खुद के राष्ट्रीय होने का दावा करते हैं, लेकिन कल्याण का सबस्क्रिप्शन का आंकड़ा 2 लाख 30 हजार के पार है। यह काफी बड़ी संख्या है। इससे समझा जा सकता है कि कल्याण ने समाज के शिक्षण के लिए कितना समर्पण दिखाया है। भारत की भाषायी पत्रकारिता के कुल इतिहास के आधे हिस्से की गवाह तो अकेले कल्याण पत्रिका ही है, जिसके 100 वर्ष अगले साल पूरे होने वाले हैं। 1927 में शुरू हुए कल्याण के प्रारंभ का प्रसंग भी खासा रुचिकर है।

वाकया यूं है कि सन 1926 में मारवाड़ी अग्रवाल महासभा का अधिवेशन दिल्ली में होना था। उस अधिवेशन के स्वागताध्यक्ष आत्माराम खेमका थे। वे शास्त्रज्ञ थे, किंतु हिंदी में व्याख्यान नहीं लिख सकते थे। सेठ जयदयाल गोयन्दका की प्रेरणा से स्वागत भाषण लिखने की जिम्मेदारी हनुमान प्रसाद पोद्दार को दी गई। हनुमान प्रसाद जी के लिखे स्वागत भाषण ने अधिवेशन में आए लोगों को मुग्ध कर दिया। इस स्वागत भाषण को सुनने के बाद सेठ जमुनालाल बजाज ने हनुमान प्रसाद जी को पत्र चलाने का प्रस्ताव दिया। यही प्रस्ताव आगे चलकर 'कल्याण' मासिक पत्र के रूप में सामने आया। 'कल्याण' का प्रथम अंक प्रकाशित हुआ जिसके मुख पृष्ठ पर 'वन्दौ चरन सरोज तुम्हारे' पद छपा था। संपादकीय पृष्ठ पर 'कल्याण' का उद्देश्य लिखित था, जिसके शब्द इस प्रकार थे- 'कल्याण की आवश्यकता सब को है। जगत में ऐसा कौन मनुष्य है जो अपना कल्याण नहीं चाहता। उसी आवश्यकता का अनुभव कर आज यह 'कल्याण' भी प्रकट हो रहा है।' हनुमान प्रसाद पोद्दार ने कल्याण को कभी लक्ष्य से भटकने नहीं दिया। उसमें विज्ञापनों के लिए कोई स्थान ही नहीं दिया गया और यह सीख महात्मा गांधी ने दी थी।

'कल्याण' की शुरुआत में पोद्दार गांधी जी से मिलने गए थे, उस

> 'कल्याण की आवश्यकता सब को है। जगत में ऐसा कौन मनुष्य है जो अपना कल्याण नहीं चाहता। उसी आवश्यकता का अनुभव कर आज यह 'कल्याण' भी प्रकट हो रहा है।'

मुलाकात में 'कल्याण' को लेकर जो सीख गांधी जी ने दी हनुमान प्रसाद पोद्दार ने उसका सदा पालन किया। 'कल्याण' की शुरूआत की बात सुनकर गांधी जी अत्यधिक हर्षित होते हुए बोले- 'कल्याण में दो नियमों का पालन करना। एक तो कोई बाहरी विज्ञापन नहीं देना दूसरे, पुस्तकों की समालोचना मत छापना।' कल्याण में यह नीति निरंतर लागू रही है। अपने इन निर्देशों को ठीक प्रकार से समझाते हुए गांधी जी ने कहा- 'तुम अपनी जान में पहले यह देखकर विज्ञापन लोगे कि वह किसी ऐसी चीज का न हो जो भद्दी हो और जिसमें जनता को धोखा देकर ठगने की बात हो। पर जब तुम्हारे पास विज्ञापन आने लगेंगे और लोग उनके लिए अधिक पैसे देने लगेंगे तब तुम्हारे विरोध

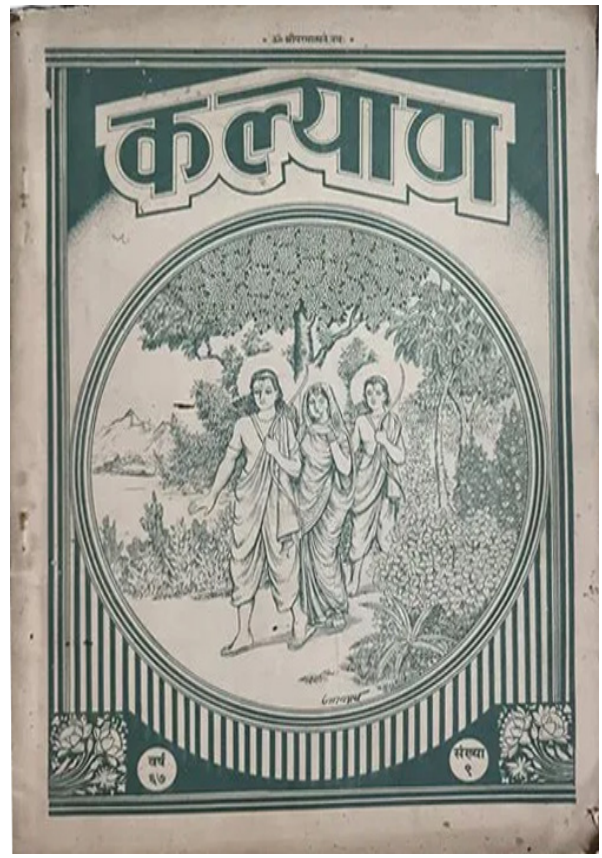

करने पर भी... साथी लोग कहेंगे... देखिए इतन पैसा आता है क्यों न विज्ञापन स्वीकार कर लिया जाए?'

बीते कुछ दशकों में पत्रकारिता एक मिशन या फिर पेशे से भी आगे बढ़कर इंडस्ट्री का रूप लेती दिखी है। यही कारण रहा कि एक बड़े समाचार पत्र के मालिक ने एक बार कहा था कि हम ऐडवर्टाइजिंग के कारोबार में हैं। इसी में बीच में खबरें भी लग जाती हैं। एक तरह से उनका कथन साफ था कि अखबार इसलिए निकाल रहे हैं कि विज्ञापन से आय हो। यदि इसी में कुछ खबरें अच्छी छप जाती हैं तो उससे कोई गुरेज नहीं है, लेकिन प्राथमिकता विज्ञापन को है। इस तरह मीडिया इंडस्ट्री को विज्ञापन उद्योग भी कहा जाने लगा है। अखबार की शुरुआत में ही 4 पन्नों का जैकेट ऐड तो रखा ही जाता है और फिर अंदर के पृष्ठों पर भी विज्ञापनों के बीच ही खबरें रहती हैं। इससे स्पष्ट है कि मुख्यधारा की मीडिया की प्राथमिकता में समाचार अथवा विचार का स्थान कहां है।

ऐसी स्थिति में कल्याण की ध्येयपरक पत्रकारिता मायने रखती है। पत्रकारिता के मिशन से लेकर प्रोफेशन तक के इस सफर में कल्याण की यह विज्ञापन नीति सभी को दिशा दिखाने वाली है। भारत में पत्रकारिता के 200 वर्षों के इतिहास में स्वराज, सरस्वती और कल्याण जैसे प्रयास मील के पत्थर रहे हैं। आज जब पत्रकारिता में मिशनरी भाव का अभाव बढ़ने लगा है, तब ये तीनों प्रयास उस अंधेरे में प्रकाशस्तंभ सरीखे नजर आते हैं।

घोटाले और भ्रष्टाचार, मीडिया के बड़े प्रहार!

सुधीर झा

देश में घोटालों और भ्रष्टाचार के बड़े मामलों का एक लंबा इतिहास है। आजादी के तुरंत बाद से लेकर मौजूदा समय तक भ्रष्टाचारियों की पहुंच धरती, जल और आकाश तक रही है। साल बदले, विभाग बदले और बदलती गई घोटालों की राशि। कुछ करोड़ से लेकर कई लाख करोड़ तक... हर घोटाला पिछले का रिकॉर्ड तोड़ता चला गया। इनमें से कई मामलों को उजागर करने का श्रेय लोकतंत्र का चौथा स्तंभ कहे जाने वाले मीडिया को जाता है। कई बार तो मामले इस कदर उछले की सत्ता की नींव हिल गई।

कई बार पत्रकारों ने सरकारी दस्तावेजों को खंगाल कर उनमें गड़बड़ियां उजागर कीं तो कभी सीएजी जैसी संस्थाओं की ओर से प्राप्त तथ्यों को जनता के सामने प्रचारित किया। परिणामस्वरूप दबाव में आकर सरकारों को जांच के आदेश देने पर पड़े और न्यायालयों के जरिए कई मामले इंसाफ की मंजिल तक भी पहुंचे। हालांकि, पत्रकारिता के व्यावसायिक स्वरूप में सरकारों की कारगुजारियों के खिलाफ लिखना बेहद चुनौतीपूर्ण है, लेकिन समय-समय पर प्रिंट और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया ने अपने कर्तव्यों का पालन किया है। विज्ञापन की मजबूरियों ने परंपरागत मीडिया के लिए चुनौतियां बढ़ाईं तो सोशल मीडिया ने एक नया दरवाजा खोल दिया है। आइए यहां देश में आजादी के बाद सामने आए भ्रष्टाचार के उन मामलों पर नजर डालें जिनमें मीडिया की भूमिका बेहद अहम रही है।

जीप घोटाला - आजाद भारत का पहला बड़ा भ्रष्टाचार

जीप घोटाले को भारत का पहला बड़ा भ्रष्टाचार मामला माना जाता है। यह घोटाला आजादी तुरंत बाद 1948 में हुआ, जब भारत-पाक युद्ध के बाद सेना को तत्काल वाहनों की जरूरत थी। उस समय ब्रिटेन की एक निजी कंपनी से 2000 से ज्यादा जीपों की खरीद का सौदा किया गया। आरोप यह लगा कि जीपों की खरीद में न तो टेंडर प्रक्रिया अपनाई गई और न ही गुणवत्ता की ठीक से जांच की गई। कंपनी को बड़ी रकम अग्रिम भुगतान के रूप में दे दी गई, जबकि तय संख्या में जीपें भारत पहुंचीं ही नहीं। यह सौदा उस समय के उद्योग मंत्री आर. के. शणमुखम चेट्टी से जुड़ा बताया गया। इस घोटाले को सामने लाने में द स्टेट्समैन और द हिंदू जैसे अखबारों की अहम भूमिका रही। मीडिया रिपोर्ट्स के बाद मामला संसद तक पहुंचा और सरकार को जवाब देना पड़ा। हालांकि, तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने इसे प्रशासनिक चूक बताया और किसी को सजा नहीं हुई, लेकिन यह मामला भविष्य में सरकारी खरीद प्रक्रिया में पारदर्शिता की बहस का आधार बना।

बोफोर्स घोटाला- जिसने राजीव की छवि पर किया फायर

1980 के दशक में भारत सरकार और स्वीडन की हथियार बनाने वाली कंपनी एबी बोफोर्स के बीच तोप खरीद सौदा हुआ था। राजीव गांधी सरकार के दौरान इस रक्षा सौदे में भारतीय नेताओं को रिश्वत दिए जाने का आरोप लगा था। आरोप लगा कि बोफोर्स कंपनी ने यह सौदा पाने के लिए भारतीय नेताओं, रक्षा अधिकारियों और बिचौलियों को करीब 64 करोड़ रुपये की रिश्वत दी। गांधी परिवार के करीबी कहे जाने वाले इटली के कारोबारी ओट्टाविओ क्वात्रोची, कुछ भारतीय रक्षा अधिकारियों और विदेशी बिचौलिए पर रिश्वत लेनदेन के आरोप लगे।

VALE'S VIDEO

THE HINDU
India's National Newspaper

'No Indian', 'No Commission', 'winding up' story in Bofors deal demolished

What the NAB Report says

What secret part of Swedish report reveals

• Win Chadha "principal beneficiary in Svenska"
• "commission payments" to "those who took care of the Bofors FH 77 deal"

New documents

Rajiv Gandhi on Bofors payments

Bring your friends to Shriram Chits Vijayadasami Gift Parade.

Mirage crashes during air show

Shriram

स्वीडन रेडियो (1987) ने एक रिपोर्ट में दावा किया कि बोफोर्स ने भारत में घूस दी है। इस पूरे मामले की शुरुआत स्वीडन रेडियो की 1987 में आई एक रिपोर्ट से हुई जिसमें दावा किया गया कि बोफोर्स ने भारत में घूस दी है। इसके बाद कुछ भारतीय पत्रकारों जैसे द हिंदू के एन राम, इंडियन एक्सप्रेस में अरुण शौरी और चित्रा सुब्रमण्यिम ने लगातार इस मामले को कई दस्तावेजों के साथ प्रकाशित किया। हथियार सौदे से जुड़े करीब 350 दस्तावेज सामने आए, जिनमें अवैध लेनदेन और नियमों को दरकिनार करने की सुर्खियां देश में चर्चा का विषय बन गईं। इसके बाद विपक्ष ने इस मुद्दे को जोरशोर से उठाकर राजीव गांधी सरकार की घेराबंदी की। राजीव गांधी पर सीधे तौर पर कभी आरोप सिद्ध नहीं हुए, लेकिन उन्हें इसकी भारी कीमत चुकानी पड़ी। राजीव गांधी की 'ईमानदार नेता' की छवि टूटी और 1989 के लोकसभा चुनाव में कांग्रेस की हार हुई।

सरकार ने शुरू में आरोपों से इनकार किया लेकिन बाद में सीबीआई को जांच सौंपने पर मजबूर हो गई। मामला अदालतों तक पहुंचा और कई साल तक केस चला। 2011 में दिल्ली हाईकोर्ट ने

सभी आरोपियों को सबूतों के अभाव में बरी कर दिया और 2019 में CBI ने केस बंद कर दिया। कानूनी तौर पर कोई दोषी साबित नहीं हुआ। लंबे कालखंड तक बोफोर्स के सहारे विपक्षी दल कांग्रेस पर 'गोले' दागते रहे। यह भारत में आधुनिक खोजी पत्रकारिता का टर्निंग पॉइंट बना। हालांकि, राष्ट्रपति रहते हुए प्रणब मुखर्जी ने इसे मीडिया ट्रायल करार दिया था।

पहली बार किसी सीएम की घोटाले से दरकी जमीन

1980 के दशक में ही महाराष्ट्र का बहुचर्चित 'सीमेंट घोटाला' भी मीडिया ने ही उजागर किया था। तत्कालीन मुख्यमंत्री एआर अंतुले पर सीमेंट कोटे का गलत तरीके से इस्तेमाल का आरोप लगा था। आरोप यह था कि 1980-81 में जब महाराष्ट्र में सीमेंट की भारी कमी थी और उद्योगपतियों-बिल्डरों के बीच भारी मांग तो मुख्यमंत्री ने मौके का फायदा उठाकर अवैध कमाई की।

आरोप लगा कि अंतुले ने अपने प्रभाव का इस्तेमाल कर निजी ट्रस्टों के लिए सीमेंट के विशेष कोटे हासिल कराए और इन्हें ऊंची कीमतों पर उद्योगपतियों और बिल्डरों को बेच दिया। बदले में उनसे चंदा लिया गया। 31 अगस्त 1981 में जब इंडियन एक्सप्रेस में अरुण शौरी ने करीब 7500 शब्दों की रिपोर्ट प्रकाशित की तो महाराष्ट्र की राजनीति में भूचाल आ गया। मीडिया रिपोर्ट्स के बाद विपक्ष सरकार के खिलाफ बेहद आक्रामक हो गया। अंतत: 1981 में एआर अंतुले को मुख्यमंत्री पद से इस्तीफा देना पड़ा।

चारा घोटाला- जब लालू को जाना पड़ा जेल

भ्रष्टाचार के सबसे चर्चित मामलों में एक चारा घोटाला भी है, जिसने एक मुख्यमंत्री को ना सिर्फ कुर्सी छोड़ने पर मजबूर किया बल्कि सालों तक जेल की सलाखों के पीछे रखा। 1996 में यह तब सामने आया जब एशियन एज के पत्रकार रवि एस झा ने सबूतों के आधार पर एक रिपोर्ट प्रकाशित की। अविभाजित बिहार के चाईबासा (अब झारखंड में) कोषागार से अवैध निकासी की खबरों के बाद कई और जिलों से गड़बड़ियां सामने आईं। यह कुल 950 करोड़ रुपये का घोटाला बताया जाता है।

1996 में घोटाला उजागर होने के बाद विरोधी दलों और जनता के दबाव में लालू प्रसाद यादव को मुख्यमंत्री पद छोड़ना पड़ा। उनके जेल जाने के बाद उनकी पत्नी राबड़ी देवी सत्ता में आईं। 1996 में पटना हाई कोर्ट के आदेश पर जांच सीबीआई को सौंपी गई। कई सालों तक कानूनी लड़ाई के बाद 2013 में पटना हाई कोर्ट ने लालू यादव को दोषी ठहराया और सजा सुनाई। इसका लालू यादव के राजनीतिक करियर पर बड़ा असर हआ। भाजपा और अन्य दलों

हिन्दुस्तान

वर्ष ७ संख्या २१५ पटना, शुक्रवार, ४ जून १९९३ ई. ज्येष्ठ शुक्ल पक्ष १५ संवत २०५० मूल्य १.२० रु. नगर

रोक के बावजूद १२ सौ करोड़ की निकासी, दोषियों पर कार्रवाई सम्भव

मुख्यमंत्री ने ७ जून को अफसरों की बैठक बुलायी

ने चारा घोटाले को चर्चित करके लालू की छवि को भारी आघात पहुंचाया।

व्यापमं घोटाला, जिसने ले ली कइयों की बलि

व्यावसायिक परीक्षा मंडल (व्यापमं) घोटाला देश के सबसे जटिल और भयावह घोटालों में से एक माना जाता है। यह घोटाला मध्य प्रदेश में मेडिकल कॉलेजों में दाखिले, इंजीनियरिंग प्रवेश परीक्षाओं और सरकारी नौकरियों की भर्ती से जुड़ा था। आरोप था कि परीक्षाओं में डमी उम्मीदवार बैठाए गए, ओएमआर शीट बदली गईं, नेताओं, अफसरों और बिचौलियों के नेटवर्क के जरिए करोड़ों रुपये लेकर चयन कराया गया।

शुरुआत में स्थानीय अखबारों और पत्रकारों ने परीक्षा परिणामों में अनियमितताओं पर सवाल उठाए। बाद में नई दुनिया, दैनिक भास्कर, इंडियन एक्सप्रेस और टीवी चैनलों ने इसे राष्ट्रीय मुद्दा बनाया। मीडिया की लगातार रिपोर्टिंग के बाद 50 से ज्यादा संदिग्ध मौतें सामने आईं। गवाहों, आरोपियों और जांच से जुड़े लोगों की रहस्यमयी मौतों ने सनसनी फैलाई। 2015 में मामला सीबीआई को सौंपा गया। सुप्रीम कोर्ट की निगरानी में जांच चली। कई राजनेता और अधिकारी आरोपी बने। व्यापमं घोटाले ने परीक्षा प्रणाली, भर्ती व्यवस्था और गवाह सुरक्षा की पोल खोल दी।

2जी स्पेक्ट्रम, यूपीए सरकार पर जब लगा बड़ा धब्बा

2जी स्पेक्ट्रम मोबाइल फोन सेवाओं के लिए इस्तेमाल होने वाली रेडियो फ्रीक्वेंसी है। यह एक सीमित और कीमती राष्ट्रीय संसाधन है, जिसे सरकार टेलीकॉम कंपनियों को लाइसेंस के जरिए देती है। देश में यूपीए-2 सरकार के दौरान 2007-2008 में 2जी स्पेक्ट्रम में घोटाले का आरोप लगा। आरोप लगे कि 2जी स्पेक्ट्रम के लाइसेंस 2008 में 2001 की पुरानी दरों पर बांटे गए, जबकि उस समय टेलीकॉम सेक्टर बहुत तेजी से बढ़ चुका था। दावा किया गया कि इससे सरकार को हजारों करोड़ रुपये का नुकसान हुआ। 'पहले आओ-पहले पाओ' नीति अपनाई गई और लाइसेंस बांटने में नीलामी नहीं की गई। कंपनियों को अचानक तारीख-समय बदलकर आवेदन के लिए बुलाया गया। कुछ कंपनियों को लाइसेंस मिलने के तुरंत बाद उन्होंने अपनी हिस्सेदारी विदेशी कंपनियों को ऊंची कीमत पर बेच दी। इससे शक गहराया कि लाइसेंस जानबूझकर सस्ते में दिए गए।

इसे उजागर करने में मीडिया की भूमिका अहम रही। इंडियन एक्सप्रेस, द हिंदू, इकोनॉमिक टाइम्स जैसे अखबारों ने लाइसेंस आवंटन की प्रक्रिया, नीति में बदलाव, फाइल नोटिंग को लगातार उजागर किया। इसके बाद नीरा राडिया के फोन टेप्स उजागर हुए। इससे साफ हुआ कि नीतिगत फैसलों पर कॉरपोरेट दबाव कितना गहरा था। 2010 में ही आए कैग रिपोर्ट में अनुमान लगाया कि सरकार को करीब 1.76 लाख करोड़ रुपये का नुकसान हुआ। यही आंकड़ा घोटाले को राष्ट्रीय मुद्दा बना गया। राजनीतिक भूचाल की वजह से मनमोहन सरकार के मंत्री ए. राजा को इस्तीफा देना पड़ा।

उन्हें और कई अधिकारियों को जेल भेजा गया। यूपीए सरकार की साख को भारी नुकसान। हालांकि, 2017 में दिल्ली की विशेष सीबीआई अदालत ने सभी आरोपियों को सबूतों के अभाव में बरी कर दिया। लेकिन सुप्रीम कोर्ट पहले ही 122 टेलीकॉम लाइसेंस रद्द कर चुका था। भविष्य में स्पेक्ट्रम आवंटन के लिए नीलामी अनिवार्य कर दी गई यह मामला निश्चत से ज़्यादा गलत नीति और मनमाने फैसलों का था और सिस्टम की खामियां उजागर हुईं।

पत्रकारिता में कला के वासंती रंग

त्रिवेणी प्रसाद तिवारी

शब्दों से सत्य का संधान है पत्रकारिता। इसमें शब्दों से जनमानस की इच्छा एवं उसकी मति का पता चलता है। दो सौ वर्षों की लम्बी पत्रकारिता की यात्रा में शब्दों के साथ कला ने भी अनूठे रूप में जनता से संवाद स्थापित किया है। रेखाचित्रों, रंगों से संवाद अधिक गहरा होता है। विशिष्ट हाव-भाव, आकार में बने चित्र हमारे चेहरे पर मुस्कान लाते हैं। जहां शब्द सीधे हृदय को वेधते हैं वहीं कलाओं का प्रवेश नयन द्वार से होता है। पहले छवि अटकती है फिर उसके अर्थ छन कर चित्त में घर कर जाते हैं। व्यंग्य की अभिव्यक्ति लोकमानस का स्वभाव है। विभिन्न उत्सवों-त्योहारों में बिना हास्य-व्यंग्य के रस नहीं पैदा होता। पत्रकारिता की सूचनात्मक धारा में मुष्टि प्रहार न करते हुए मिष्टी प्रहार का कार्य कला निभाती है। संवाद की अनवरत धारा में कलाएं कहीं अन्योक्ति तो कहीं व्यंजना भाव में प्रकट होती है। रेखाचित्रों के माध्यम से जनसाधारण के मुख पर मुस्कान और शब्दों के पीछे की सच्चाई को बड़ी सहजता से व्यक्त किया जा सकता है।

किसी समाज की गुलामी उसकी मानसिकता में छिपी रहती है। परतंत्रता को तोड़ने से पहले उसे आध्यात्मिक और सांस्कृतिक पुनर्जागरण से गुजरना पड़ता है। आध्यात्मिक जागरण की ज्योति स्वामी दयानंद सरस्वती, स्वामी विवेकानंद जैसे कई तपस्वियों ने जगाई और सांस्कृतिक रूप से कलाओं के माध्यम से राजा रवि वर्मा ने भारतीय आराध्य देवी-देवताओं एवं रामायण आदि पर चित्र बनाकर आरंभ कर दिया था। उनकी विषय-वस्तु भारतीय होने के कारण भारत का लोकमन विश्रांति का अनुभव करता था। लोक आस्था जिन आराध्यों को चित्र रूप में पाकर विह्वल थी उसका एक अन्य वास्तविक स्वरूप आना बाकी था। जब अंग्रेजों ने बंगाल का विभाजन किया उसके विरोध में बंग-भंग आन्दोलन को प्रथम बार भारतमाता की छवि के रूप में कला का अवदान दृष्टिगोचर होता है। अवनीन्द्रनाथ ठाकुर की यह कृति भारत की भावना का सच्चा निरुपण करती है। इस पेंटिंग में 'वन्दे मातरम्' गीत में वर्णित मां भारती को एक सन्यासिनी वेश में धान्य, पुस्तक, माला लिए सुन्दर स्वरूप में चित्रित कर भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन को आधार प्रदान किया। यह रूपक आज भी भारतीयता का आराध्य है। यह राजा रवि वर्मा के देवी चित्रों की तुलना में अधिक दैवीय प्रतीत होती है।

कला की यात्रा देशकाल के अनुसार भारतीय चेतना का संवाहक बनी रही। हरिपुरा कांग्रेस सम्मेलन में नन्दलाल बसु द्वारा बनाए गए पोस्टर चित्र, कलाकार और समाज की गहरी परख का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। अवनीन्द्रनाथ ठाकुर और नन्दलाल बसु की शिष्य परम्परा ने निरंतर भारतीय कला की मूल पहचान को स्थापित करने का आन्दोलन चलाया।

चित्र-मूर्ति कलाओं की मुख्य धारा में सृजन करने वाले कई कलाकार जहां अपनी कृतियों से वासंती स्वर को पुष्ट कर रहे थे वहीं पत्र-पत्रिकाओं में छपने वाले व्यंग्य चित्र, कई हजार शब्दों के मुकाबले कुछ रेखाओं में तत्कालीन राजनीति व शासकों की मंशाओं को उजागर कर देते हैं। व्यंग्य चित्रों का ध्वन्यार्थ बहुत सशक्त होता है। ब्रिटिश शासन के समय 1850 ई. तक अंग्रेजों की अपनी शासन प्रणाली को लेकर पत्रों के रेखांकन में एक नरम व्यवहार दिखाई पड़ता है। 1850 ई. के पश्चात राष्ट्रवादियों द्वारा 'बंगाल हरकारू' और 'इंडिया गजट' में प्राथमिक रूप से व्यंग्य चित्र देखने को मिलता है। 1850-57 ई. के दौरान छपे 'दिल्ली स्कैच बुक' को सामान्यतः पहली व्यंग्यात्मक पत्रिका माना जाता है। बंगाल शैली के अनन्य प्रतिभाशाली चित्रकार गगनेन्द्रनाथ ठाकुर को व्यंग्य चित्रों का प्रणेता माना जाता है। 'प्रोबासी' (प्रवासी) पत्रिका में छपे उनके चित्र भारतीय पत्रों के लिए रेखांकन में अग्रणी हैं क्योंकि वो पहले कलाकार थे जिन्होंने भारतीय दृष्टिकोण से व्यंग्यचित्रों को दिखाया।

उनके चित्रों में ब्रिटिश उपनिवेशवाद और पश्चिमी जड़ता में फंसे भारतीय समाज का अंकन है। अद्भुत लोक पत्रिका में छपे उनके चित्र तत्कालीन सामाजिक-राजनीतिक परिस्थितियों पर करारा कटाक्ष करते थे। जैसे उनका एक रेखाचित्र है "बाबू" जिसमें एक व्यक्ति अंग्रेजों की नकल के कपड़े पहन कर अपने परिवार के आगे-आगे चल रहा है। उसकी चाल में अंधानुकरण प्रतिबिम्बित हो रहा है। "कायांतरण" नामक व्यंग्य चित्र में एक ट्रेन में भारतीय व्यक्ति को गोरे आदमी अर्थात् अंग्रेज के रूप में परिवर्तित होते हुए दिखाया गया है। इस प्रकार उनके कई चित्र 'मॉडर्न रिव्यू' में छपते रहे हैं जिसमें अंग्रेजियत की नकल और भारतीय समाज में व्याप्त वर्गश्रेष्ठता पर कटाक्ष किया गया है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् प्रथम राजनीतिक कार्टूनिस्ट के रूप में शंकर पिल्लई के व्यंग्यचित्रों को माना जाता है। उनके चित्र 'शंकर वीकली' में छपते थे जो उस समय बहुत लोकप्रिय था। उनके रेखाचित्रों में राजनीतिक कटाक्ष मूल विषय होता था। कार्टून के लिए उन्हें भारत का पितामह भी कहा जाता है। दूसरे बहुचर्चित रेखाचित्रों में आर. के. लक्ष्मण के व्यंग्य की लम्बी यात्रा रही है। उनके द्वारा चित्रित 'आम आदमी' वास्तविक रूप से आम भारतीय जनमानस का प्रतिबिम्ब बन चुका है। विभिन्न कलाकारों द्वारा बनाए गए कार्टून स्ट्रिप बहुत कम रेखाओं में बड़ी रिपोर्टिंग करते हैं। ये कार्टून चरित्र हमारे मानसबिम्ब में स्थायी घर कर जाते हैं। जैसे-लक्ष्मण का धोती-कुर्ता पहने 'आम आदमी' जो सभी राजनीतिक-सामाजिक घटनाओं में चुपचाप साक्षी भाव से उपस्थित रहता है। कार्टूनिस्ट प्राण के चाचा चौधरी बुद्धिमत्ता के प्रतीक हैं।

जिस प्रकार पत्रकारिता में तीव्रता एवं क्षिप्रता एक आवश्यक गुण है उसी प्रकार की तीव्रता रेखाचित्रों में पहले से ही होती है। भारतीय पत्रकारिता की अनवरत यात्रा में कला के रूप में रेखाचित्र एक विशुद्ध विधा बनकर हमारे सामने आती है जिसमें सूचना है, संवाद है, आलोचना है, और भाव प्रवणता भी है। सूचनाओं के कालखण्ड में कला भी पत्रकारिता का अनन्य रूप बनकर निरंतर प्रवहमान है। कला के विभिन्न स्वरूप अपने स्तर पर संवाद का ही कार्य करते हैं भले ही उनकी गति और मंच अलग-अलग हों लेकिन यह निर्विवाद सत्य है कि पत्रकारीय अवधारणा में व्यंग्यचित्रों द्वारा रिपोर्टिंग सबसे तेज और आनन्ददायक होता है।

समिट में मंथनः मीडिया में AI का प्रयोग और विश्वसनीयता की चुनौती

तकनीक नहीं, संस्थागत कार्यप्रणाली से बनती है मीडिया की विश्वसनीयता

डॉ. रविंद्र सिंह भड़वाल

भारत मंडपम में 16 से 21 फरवरी तक आयोजित 'इंडिया-एआई इंपैक्ट समिट-2026' में एआई को समावेशी और विकास-केंद्रित बनाने के लिए विशेषज्ञों ने गहन चिंतन किया। शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि, विज्ञान, कारोबार, राजनीति जैसे महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों में एआई (आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस) की चुनौतियों एवं संभावनाओं पर विमर्श के लिए सम्मेलन में करीब 500 सत्रों का आयोजन किया गया। मीडिया जगत भी एआई के प्रभावों से अछूता नहीं रहा है। एआई एंकर, एआई क्लोन, वॉइस क्लोनिंग और एआई आधारित स्टोरीटेलिंग अब मीडिया का जरूरी हिस्सा बनने लगे हैं। ऐसे में मीडिया क्षेत्र में एआई के प्रभाव पर चर्चा के लिए 'एआई और मीडियाः अवसर, जिम्मेदारी एवं आगे की राह' विषय पर एक विशेष सत्र का आयोजन किया गया। सत्र में मीडिया जगत की प्रमुख हस्तियों ने न्यूजरूम की कार्य संस्कृति, राजस्व मॉडल और पब्लिक डिस्कोर्स पर एआई के प्रभाव का विश्लेषण किया।

निःसदेह एआई के उपयोग से समाचार लेखन की गति और दक्षता दोनों बढ़े हैं। इससे लागत में कमी आई है और जटिल डाटा के विश्लेषण में अभूतपूर्व क्षमता विकसित हुई है। मगर साथ ही सूचनाओं के प्रसार में मीडिया की विश्वसनीयता और जवाबदेही के संकट को लेकर भी चिंताएं उभरी हैं। एआई स्वयं उत्तरदायी सूचनाओं का सृजन करने में अक्षम है। वह उपलब्ध डाटा और एल्गोरिद्म के आधार पर सामग्री तैयार करता है। ऐसे में यदि डाटा पक्षपातपूर्ण है या एल्गोरिद्म में पूर्वाग्रह निहित है, तो निश्चित ही उससे मिलने वाले परिणाम भी विकृत होंगे। यही वह बिंदु है, जहां संपादकीय विवेक और संस्थागत उत्तरदायित्व की भूमिका निर्णायक हो जाती है। बेनेट कोलमैन एंड कंपनी लिमिटेड के ग्रुप चीफ ऑपरेटिंग ऑफिसर एवं एग्जीक्यूटिव डायरेक्टर मोहित जैन ने इसी तथ्य को रेखांकित करते हुए कहा, 'संपादकीय विवेक, तथ्यों की पुष्टि और संस्थागत स्मृति कोई विकल्प नहीं हैं, बल्कि बुनियाद हैं। प्रेस केवल सूचना देने वाला माध्यम नहीं है। वह विश्वास का निर्माण करता है, संदर्भ प्रदान करता है और जो कुछ प्रकाशित करता है उसकी नैतिक और कानूनी जिम्मेदारी स्वीकार करता है। जवाबदेही की यही स्थिति उसे अलग पहचान देती है। जब एआई सूचना को एक साधारण वस्तु (कमोडिटी) बना देगा, तब भरोसा दुर्लभ हो जाएगा और यही दुर्लभता उसकी सबसे बड़ी कीमत बनाएगी।'

भाषा एवं संरचना की दृष्टि से एआई जेनरेटेड सामग्री प्रायः प्रभावशाली प्रतीत होती है, लेकिन उसमें संदर्भों, तथ्य-पुष्टि और संपादकीय विवेक का अभाव ही रहता है। यह स्थिति 'विश्वास का भ्रम' उत्पन्न करती है। पाठक को लगता है कि वह विश्वसनीय सूचना पढ़ रहा है, जबकि उसके स्रोत और सत्यापन की प्रक्रिया संदिग्ध होती है। इस क्षेत्र में हो रहे शोध में यह चिंता उभरकर सामने आ रही है कि यदि समाचार संस्थान केवल गति और क्लिक-आधारित अर्थव्यवस्था पर केंद्रित रहेंगे, तो एआई-निर्मित सामग्री लोकतांत्रिक विमर्श को कमजोर कर सकती है। 'इंडिया टुडे ग्रुप' की वाइस-चेयरपर्सन और एग्जीक्यूटिव एडिटर-इन-चीफ कली पुरी ने एआई से तैयार की गई सामग्री के खतरों के प्रति आगाह करते हुए कहा, 'इस समय एआई जवाबदेह सूचना उपलब्ध नहीं करवा पा रहा है। दरअसल, जो तैयार हो रहा है वह एक तरह का 'एआई स्लॉप' है, जिसे हम देख चुके हैं और यह भरोसे का एक झूठा भ्रम पैदा कर सकता है।' कली पुरी ने कहा कि इंडिया टुडे जैसे समाचार ब्रांड केवल ऑडियंस तक सूचनाएं पहुंचाने का काम नहीं करते। उन्होंने कहा, 'समाचार और प्रमाणित मीडिया ब्रांड जनमत को आकार देते हैं। भारत जैसे देश में, जहां साक्षरता का स्तर अलग-अलग है, यह जिम्मेदारी जवाबदेह संस्थानों की होनी चाहिए, न कि गुमनाम एल्गोरिद्म की।' उन्होंने आगे कहा, 'हमें तकनीक से प्रेम है। हमारे पास एआई एंकर, एआई क्लोन, वॉइस क्लोनिंग और एआई आधारित कहानी कहने की तकनीक भी है। लेकिन एआई की जवाबदेही के साथ किसी न किसी इंसान का नाम जुड़ा होना जरूरी है।'

विशेषज्ञों की एक आम राय है कि एआई पत्रकारिता का विकल्प नहीं, बल्कि उसका विस्तार है। एआई, न्यूज कंटेट को गहराई देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। फिर भी किसी मुद्दे की सामाजिक संवेदनशीलता, नैतिक प्रभाव और राजनीतिक निहितार्थों का आकलन अभी भी मानवीय अनुभव और विवेक पर निर्भर करता है। यदि एआई को मानव पत्रकारिता के सहयोगी के रूप में देखा जाए, जहां तकनीक दक्षता और गहराई प्रदान करे तथा अंतिम निर्णय मानव विवेक द्वारा लिया जाए, तो यह मीडिया की गुणवत्ता और विश्वसनीयता दोनों को सुदृढ़ कर सकता है। 'अमर उजाला' के प्रबंध निदेशक तन्मय महेश्वरी ने इस संदर्भ में कहा कि उनकी संस्था एआई को मुख्य रूप से एक सहायक तकनीक के रूप में देखती है। उन्होंने कहा, 'हमारे लिए एआई सिर्फ एक और नई तकनीक है। इसका उपयोग मानव कार्य को बेहतर बनाने, लेख को और गहराई देने तथा उसकी सामग्री के मूल्य को बढ़ाने के लिए किया जाता है। इसलिए हम एआई को किसी भी चीज़ का विकल्प नहीं मानते।'

तकनीक, विशेषकर एआई पत्रकारिता में उत्पादन और वितरण प्रक्रिया को उन्नत बना सकती है, परन्तु विश्वास का निर्माण केवल तकनीकी दक्षता पर आधारित नहीं हो सकता। अतः एआई का उपयोग मीडिया संस्थाओं के लिए एक सक्षम एवं सहयोग उपकरण के रूप में किया जा सकता है, मगर यह विश्वास का निर्माण करने में पूरी तरह से सक्षम नहीं है। प्रेस स्वतंत्रता की रक्षा, जानकारी की तथ्यात्मक पुष्टि और सार्वजनिक हित की रक्षा करना पत्रकारिता के संस्थागत मूल्य हैं, जो तकनीक के ऊपर खड़े होते हैं और मीडिया को विश्वसनीय बनाते हैं। इस ओर ध्यान आकर्षित करते हुए दि हिंदू के मुख्य कार्यकारी अधिकारी एल.वी. नवनीत ने कहा कि मीडिया में विश्वास तकनीक से नहीं, बल्कि संस्थानों से बनता है। उन्होंने कहा, 'जब मीडिया की बात आती है, तो विश्वास तकनीक पैदा नहीं करती। यह संस्थानों द्वारा निर्मित होता है।'

पिछले एक दशक में भारतीय मीडिया परिदृश्य ने तीव्र तकनीकी परिवर्तन का अनुभव किया है। तकनीक ने सूचना को सर्वसुलभ बना दिया है। सस्ते और असीमित इंटरनेट डेटा पैकेजों के आगमन ने समाचार उपभोग के तौर तरीकों को भी बदला है। इसी क्रम में अब कृत्रिम मेधा ने मीडिया पारिस्थितिकी को एक नए चरण में पहुंचा दिया है, जहां प्रत्येक व्यक्ति न केवल सूचना का उपभोक्ता है, बल्कि संभावित रूप से उसका उत्पादक और प्रसारक भी बन चुका है। 'दैनिक भास्कर' के उप प्रबंध निदेशक पवन कुमार ने कहा कि पहले भी तकनीकी बदलावों ने मीडिया उपभोग के स्वरूप को बदला है। उन्होंने कहा, 'हमने दो बड़े तकनीकी परिवर्तन देखे हैं। पहला था असीमित डेटा पैकेज। भारत में वर्ष 2015 में कंपनियों ने 200 से 300 रुपये प्रति माह के बीच शुल्क लेकर उपयोगकर्ताओं को जितना चाहें उतना इंटरनेट उपयोग करने की सुविधा देना शुरू किया। इससे उपभोग की प्रकृति पूरी तरह बदल गई। अब कृत्रिम बुद्धिमत्ता के आगमन के साथ तकनीक हर व्यक्ति को सामग्री, निःशुल्क डेटा और जानकारी के माध्यम से सशक्त बना रही है।'

एआई केवल कार्यकुशलता बढ़ाने का साधन भर नहीं रह गया है। इसने पब्लिक डिस्कोर्स की संरचना को भी गहरे तक प्रभावित करना शुरू कर दिया है। कृत्रिम रूप से निर्मित चित्र, ध्वनि और वीडियो जनमत को प्रभावित कर सकते हैं। शोधकर्ताओं ने इसे 'एल्गोरिद्मिक मध्यस्थता' की संज्ञा दी है, जहां सूचना का प्रवाह मशीन-आधारित निर्णयों से नियंत्रित होता है। ऐसे में यहां प्रश्न उठता है कि इन प्रणालियों की जवाबदेही किसके प्रति है और इनके संचालन में पारदर्शिता कितनी है। इंटरनेशनल न्यूज मीडिया एसोसिएशन से संबद्ध रॉबर्ट व्हाइटहेड ने चेतावनी दी कि कृत्रिम बुद्धिमत्ता बहुत तेज़ी और बड़े पैमाने पर भ्रामक जानकारी फैला सकती है। व्हाइटहेड ने कहा कि यदि कृत्रिम बुद्धिमत्ता पत्रकारिता सामग्री को मिलाने, उसका संक्षेप तैयार करने और उसे वितरित करने लगे, तो वह केवल सामग्री का प्रबंधन नहीं कर रही होती, बल्कि "पब्लिक डिस्कोर्स में भागीदारी" कर रही होती है। उन्होंने कहा, 'जो भी किसी लोकतांत्रिक प्रक्रिया में भाग लेने लगता है, उसके लिए देखभाल और जिम्मेदारी का एक अलग और उच्च मानक होना चाहिए।'

कृत्रिम मेधा को लेकर जारी आशंकाओं और संभावनाओं के द्वंद्व के बीच एक तथ्य निर्विवाद रूप से उभर कर सामने आता है कि एआई अब विकल्प नहीं, बल्कि मीडिया पारिस्थितिकी का अभिन्न अंग बनने की दिशा में अग्रसर है। इसका स्वरूप और प्रभाव कितना व्यापक होगा, यह निश्चय ही आने वाले समय में एआई में तकनीकी विकास, नियामकीय ढांचे, संपादकीय नैतिकता और संस्थागत दूरदृष्टि पर निर्भर करेगा। नई दिल्ली में आयोजित एआई शिखर सम्मेलन के मीडिया-केंद्रित सत्र 'एआई और मीडियाः अवसर, जिम्मेदारी एवं आगे की राह' ने यह स्पष्ट संकेत दिया है कि एआई को 'विश्वास', 'जवाबदेही' और 'संपादकीय विवेक' के साथ संतुलित करने की आवश्यकता है। सूचना के तीव्र उत्पादन के इस युग में मानव-संपादक की भूमिका संदर्भ, संवेदना और सत्यापन की कसौटी पर और अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाएगी। अंततः, एआई मीडिया का भविष्य निर्धारित नहीं करेगा, बल्कि मीडिया जगत एआई के उपयोग की दिशा तय करेगा।

मन वसंत का राग

त्रिवेणी प्रसाद तिवारी

लोकमन के सरस चितेरे पं0 विद्यानिवास मिश्र का प्रसिद्ध निबन्ध है ''वसंत आ गया पर कोई उत्कंठा नहीं''। शीर्षक चौंकाने वाला है कि कहीं यह निराशावादी तो नहीं ? इसमें निराशा तो नहीं पर विरस मन तो है। वसंत तो आ चुका है परन्तु कवि मन में उमंग क्षीण है। उसके आने पर उत्कंठित न होना विराग ही है, जो भारतीय मनस का स्व से रागातीत हो जाने का संवाद है। यह संवाद अंदर की ओर है जिसमें जीवन सत्य का आभास दिखाई पड़ता है। सनातन जीवन में आनेवाला हर त्योहार एक सामाजिक संवाद है। यह संवाद व्यक्ति और समाज के बीच या व्यक्ति से स्व के बीच किसी रूपक के माध्यम से होता है। कोई त्योहार दीपों के आलोक में है, कोई रंगों के अमूर्तन फैलाव में है तो कोई जलाभिषेक - कुम्भ या काँवड़ में।

व्यक्ति उन्मन है तो क्या हुआ ? लोक, वीतरागी नहीं होता। वह तो उत्सवधर्मी होता है। फागुन की सुरमयी आहट में गुनगुना उठता है। मन उद्भ्रांत हो सकता है पर लोक नहीं क्योंकि वह कोई व्यक्ति नहीं हैं। वह तो मनरागी है। उठी तान पर रघुबीर के होरी खेलने का गीत जब हवा में उठता है तो गाँव - गाँव अजोध्या जी हो जाता है। किसी मन्दिर के सामने बौराये आम के नीचे जुटी मंडली में फाग की चढ़ती - उतरती टेर में नन्द के लाला को ढूंढ़ती गोपियाँ, वास्तव में हमारा मन ही तो है जो रागी मन का रंग लिए हर फागुन में खोजता है साँवरे को। फागुन चढ़ते ही मौसम में खुनक बढ़ जाती है। अदहन होती धूप से सरकती बयार छाया में ठंड बढ़ा देती है और मन फिर अदहन होना चाहता है। खेत - जवार से एक धुन उठती है। बुलाने लगता है किसी अपने को - 'कहवाँ गइले होऽ रामाऽ, अजहूँ ना अइले, बीतल जात फगुनवा हो रामाऽऽ.....

दूर कहीं फूटा पलाश और सरसों की पीली पुरवइया केसरिया बन मन को रंगने लगती है। वसंत की किलकार होली का फाग बन फिरने लगती है वन-वन। लोक उन्मत्त हो जाता है। श्रृँगार, प्रेम, वियोग, उपालम्भ हर किसिम के भाव गीत बहने लगते हैं। भंगरस की मीठी उमगन में रंग पगे चेहरे की उनींदी आँखों से टेर लगाती - होऽ होऽऽऽ ओऽऽ हां हां हांय की ठसी थाप पर बिहारी जी को भी नाचना ही पड़ जाता है। मंद्र से उठा स्वर तार सप्तक तक खिंचती हुई... चढ़ती हुई ब्रह्मनाद को छूती फिर सम पर आके खेल करती है। लोक जब रागों को छेड़ता है तो शास्त्रीयता मुलायम हो जाती है। वहाँ द्रुत - विलम्बित का खयाल नहीं रह जाता- बस बहता है मनराग और सिक्त हो उठता है सुसुवाया समाज। शास्त्रों के मर्म तब अधिक भाग्यवान हो जाते हैं जब लोक उन्हें अपने तद्भव कंठों से दुहराता है ज्यों - काग के भाग बड़े सजनी हरि हाथ से ले गयौ माखन रोटी। भारत की प्रकृति ज्ञानमार्गी है परन्तु उसका लोकमन उत्सवधर्मी है। ज्ञान ऋजु होता है और जिसे धारण करना है वह मन, अधिक चंचल है तो बात बने कैसे ? इसलिए ज्ञान का प्राकृतिक भाव जब उत्सव रूप में ढ़लता है तो उच्छृंखल मन उसमें रंग जाता है।

उत्सव व्यक्ति के नहीं होते, वो तो पूरे लोक का होता है। व्यक्ति विरागी हो सकता है परन्तु सौंदर्य की अवमानना लोक नहीं कर सकता। उसके स्वागत में रागी, विरागी और वीतरागी सभी को अपनी पुरानी द्वन्द्व की पीली पात झाड़ना ही होता है। यह भारत का ही अद्भुत भाव है कि किसी मौसम को उत्सव के रूप में मनाता है। संस्कृत साहित्य में इसे मदनोत्सव के रूप में वर्णित किया गया है। इस क्रम में एक वर्णन 'अशोक दोहद' की श्रृँगारिक परम्परा के रूप में बहुचर्चित रही है। मूर्तिकला में शालभंजिका का सौंदर्यपूर्ण अंकन वसंत की कलात्मक उद्भावना है।

वसंत आता कहाँ से है ? सबसे पहले कौन बताता है कि वसंत आ गया ? ''आखिर कहाँ से आता है वसंत'' इस नाम से प्रसिद्ध जापानी कहानीकार ताजिमा शिन्जी की एक कहानी है। इसमें बन्दरों के एक कुनबे को अपने त्रस्त जीवन से बाहर निकलने की कहानी है। यह मानवीय रूपक भी प्रस्तुत करती है। इस कुनबे का अनुभवी बूढ़ा बन्दर किसी सुदूर स्थान पर वसंत के होने और उसे खोजने की योजना बनाता है। वसंत यानि एक सुख जिसे खोजने की कष्टप्रद यात्रा में सबको उसके द्वार तक पहुँचाते हुए स्वयं को बलिदान कर देता है और सारे बच्चे, नवयुवक उसके उपर से कूदते हुए खुशी से बसंत में प्रवेश कर जाते हैं। इस कहानी में बसंत को पाने का रास्ता रेखीय है। कोई एक जगह है जहाँ पहुँचकर सुख की सभी चीजें मिल जायेंगी। व्यक्ति वहीं रहेगा किन्तु प्राप्ति नवीन हो जायेगी? यह अपूर्ण चिंतन है। यहीं भारतीय दृष्टि अलग आयाम पर चिंतन प्रस्तुत करता है। वह बसंत के कहीं दूर स्थित किसी वस्तु रूप में होने की कल्पना नहीं करता बल्कि मनुष्य के भीतर ही होने की बात करता है। यह अन्दर से बाहर की ओर आता है जैसे फूल खिलता है पौधे के अन्तर से। भारत की जीवन पद्धति में चेतना खुलती नहीं, खिलती है। चेतना में स्व का खिल जाना ही वसंत का आगमन है। अनुकूल या प्रतिकूल किसी भी परिस्थिति में रहकर जो प्राप्त है उसी से रस सोखकर अंतर से नव कलिका को खिलने देना है। वसंत की प्रतीक्षा करनी पड़ती है। उसका आगमन होता है, उसकी ओर भागना नहीं होता। वह स्वयं चलकर आयेगा। उसे आना ही है क्योंकि वह एक समय चक्र है। बस हमें वसंत के लायक बनना होगा। कड़क शिशिर हो या तपती लू या कि मूसलाधार वर्षाकाल सभी मौसम में चेतना की शाखा को हरा रखना है क्योंकि इन्हीं डालियों के कक्षस्थों से कलिकाएँ फूटेंगी। ज्योंही वसंत का आगमन होगा चेतना के फूल खिल उठेंगे। पत्तियाँ नहीं होंगी कृषकाय, डालियों पर केवल रंग धरे होंगे। सुगन्ध से हवा सुवासित होगी और बावली बयार मद्धिम हो जायेगी। हमारे जीवन की सारी तैयारियाँ ही वसंत में खिल जाने के लिए हैं। इतनी प्रियता से शुभता का संचय करना है कि सब संचय का सुफल सुन्दरम हो जाय। उसके दृष्टिपात् मात्र से फूल खिल जाय जैसे राम के देखने भर से अयोध्यावासी निहाल हो जाते हैं। कुछ ऐसा है वसंत।

जोहो: संवाद का स्वदेशी सेतु बनाने का प्रयास

डॉ. हरीश चंद्र ठाकुर

आज के दौर में प्रौद्योगिकी और व्यापार में आयात और निर्यात पूरे विश्व में युद्ध के कारण बन रहे हैं। ऐसी स्थिति में सबसे बेहतर तकनीक और सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म अपने देश में विकसित होना हर राष्ट्र की प्राथमिकता में है। भारत ने भी इस दिशा में नई पहल शुरू की है, जिसका श्रेय देश की सबसे बड़ी बहुराष्ट्रीय सॉफ्टवेयर कंपनी जोहो कॉरपोरेशन के संस्थापक डॉ श्रीधर वेम्बु को जाता है। डॉ वेम्बु भी मेड इन इंडिया को आज के समय में एक शक्तिशाली ब्रांड मानते हैं। वर्तमान समय में जीपीएस, ऑपरेटिंग सिस्टम्स, चैट जीपीटी सहित अनेकों सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म और संवाद के संसाधन विदेशी हैं, जो किसी भी समय खतरनाक हो सकते हैं। ऐसे में राष्ट्रीय सूचना विज्ञान केंद्र (एनआईसी) की एक प्रतिस्पर्धा मूल्यांकन प्रक्रिया में सफल होने के बाद जोहो का चयन हुआ।

Arattai

भारत सरकार पहले से ही जोहो में लगभग 15 लाख मेल बॉक्स उपयोग कर रही है, जो संवाद के स्वदेशी सेतु को देश में बढ़ावा देने की दिशा में एक सकारात्मक पहल है। पिछले एक महीने में जोहो और अरट्टै का उपयोग करने वालों की संख्या में वृद्धि हुई है, देश के गृहमंत्री सहित अन्य प्रमुख हस्तियों ने जोहो और अरट्टै में अपने खाते खोले हैं। जानकारी के अनुसार पहली अक्तूबर को एक ही दिन में बीस लाख नए उपभोक्ता जुड़े ऐसा अनुमान है। जोहो कॉरपोरेशन के संस्थापक ने एक साक्षात्कार में दावा किया है कि स्वदेशी मैसेजिंग एप्प अरट्टै आने वाले समय में अपनी तकनीकी विशिष्टताओं के चलते लोकप्रिय हो जाएगा। वॉइस कॉलिंग, वीडियो, लो बैंडविड्थ ऑप्टिमाइजेशन, 100 करोड़ उपयोगकर्ताओं तक इसकी पहुंच, बेहद जटिल और गंभीर है। सबसे बड़ी बात यह है कि इसका डाटा देश में ही रहेगा, जो अन्य की तुलना में सबसे बड़ी बात है। हमें अरट्टै को समझने से पहले जोहो को समझना जरूरी होगा, यह कोई नया स्टार्टअप नहीं, बल्कि एक स्थापित भारतीय टेक्नोलॉजी दिग्गज कंपनी है, जो दुनियाभर में पहले से कारोबार करती है। जोहो का इकोसिस्टम सिर्फ एक एप तक सीमित नहीं है. यह जोहो मेल (ई-मेल सेवा), जोहो राइटर (डॉक्यूमेंट), जोहो शीट (स्प्रेडशीट) और जोहो शो (प्रेजेंटेशन) जैसे दर्जनों सॉफ्टवेयर एप्लीकेशन का एक मजबूत सूट प्रदान करता है। हम इसे गूगल की तर्ज पर भी समझ सकते हैं, लेकिन कंपनी की प्रसिद्धि उसकी गोपनीयता-केंद्रित और विज्ञापन-मुक्त नीतियों पर बनी है। जहां गूगल और मेटा (फेसबुक) जैसी टेक कंपनियां प्रयोगकर्ताओं के आंकड़ों और उनको दिखाये जाने वाले विज्ञापनों पर केंद्रित हैं, वहीं जोहो उपयोगकर्ताओं के डाटा का ऐसा इस्तेमाल नहीं कर रही है। आने वाले समय में क्या स्थिति होगी यह कहना अभी जल्दबाजी होगी, क्योंकि इस क्षेत्र में कामयाबी के लिए दीर्घकालिक प्रतिबद्धता बहुत जरूरी है, तभी सफलता हासिल होगी। संवाद के इस स्वदेशी सेतु के नाम को लेकर भी कुछ दिन चर्चाओं का दौर चलता रहा, जैसे लोगों को अरट्टै शब्द के अर्थ के बारे में जानकारी मिली, तो एप्प के नाम को बदलने की चर्चाओं पर विराम लग गया। अरट्टै जिसका तमिल में अर्थ होता है 'गपशप'। उदाहरण के लिए, एक बहुत अच्छा चैट इंजन बनाने में कम से कम 15-20 वर्ष का समय लगता है। एक बहुत अच्छे अत्याधुनिक सेमीकंडक्टर फैब की 10-15 साल की यात्रा हो सकती है। इस तरह के गहन प्रौद्योगिकी कार्य, जिनमें दीर्घकालिक प्रतिबद्धता की आवश्यकता होती है, वेंचर कैपिटल मॉडल में आसानी से संभव नहीं हैं। इसके लिए अलग तरह की सोच की आवश्यकता होती है। लोगों को इसके लिए प्रतिबद्ध रहना पड़ता है। परिणाम के लिए उन्हीं लोगों को दस साल तक एक साथ काम करना पड़ता है। ऐसे फंडिंग मॉडल असल में उस दृष्टिकोण को प्रोत्साहित नहीं करते हैं। अब देखना यह है कि वर्तमान दौर में हर कोई व्हाट्सएप पर है, ऐसे में कोई उपभोक्ता अरट्टै पर जाने की योजना क्यों बनाए, जहां अभी उसके संपर्क के कम लोग है। देश के करोड़ों लोग व्हाट्सएप के प्रारूप और फीचर्स के इतने अभ्यस्त हो चुके हैं कि उन्हें उससे बाहर लाने के लिए जोहो और अरट्टै के नये प्लेटफॉर्म को बड़ी मेहनत करनी होगी।

ZOHO

सभी को ज्ञात है कि उपयोगकर्ता की एक बार जो डिजिटल आदतें बन जाती हैं, उनको बदलना बेहद जटिल है. जैसे कू व हाइक जैसे स्वदेशी एप्स को शुरुआती उत्साह, सरकारी समर्थन और ट्विटर विवादों के चलते खूब डाउनलोड तो मिले, पर टिकाऊ सफलता हासिल नहीं हो सकी। अरट्टै के पास जोहो की तकनीकी क्षमता, भारत केंद्रित सर्विस और प्रमोटर्स का समर्थन तो है, पर प्रयोगकर्ताओं को प्लेटफॉर्म बदलने के लिए ठोस कारण देना, लोगों की निजता की गारंटी देना और लगातार नवाचार और समय की जरूरत ही अरट्टै के भविष्य का निर्धारण करेगा।

मिशन, परमिशन, प्रोफेशनलिज्म से कमीशन तक हिंदी पत्रकारिता के 200 वर्ष

डॉ. वैभव उपाध्याय

आज हम सभी हिंदी पत्रकारिता के दो सौ वर्ष मना रहे हैं। हिंदी पत्रकारिता के 200 वर्ष केवल एक भाषा की पत्रकारिता का इतिहास नहीं हैं, बल्कि यह भारत की सामाजिक चेतना, राष्ट्रीय आंदोलन, सांस्कृतिक पुनर्जागरण और लोकतांत्रिक विकास की सतत यात्रा का जीवंत दस्तावेज़ है। 30 मई, 1826 को पंडित जुगल किशोर शुक्ल द्वारा प्रकाशित **'उदन्त मार्तण्ड'** से आरंभ हुई हिंदी पत्रकारिता ने औपनिवेशिक दमन, स्वतंत्रता संग्राम, राष्ट्र-निर्माण और वैश्वीकरण के दौर तक जनमत के निर्माण में केंद्रीय भूमिका निभाई है। इसलिए हिंदी पत्रकारिता को सामाजिक परिवर्तन के सशक्त माध्यम के रूप में देखा जा सकता है।

प्रारंभिक हिंदी पत्रकारिता का उद्देश्य केवल समाचार संप्रेषण नहीं था, बल्कि वह औपनिवेशिक सत्ता के विरुद्ध वैचारिक प्रतिरोध का माध्यम बनी। उदन्त मार्तण्ड, बनारस अख़बार, समाचार सुधावर्षण जैसे पत्रों ने जनभाषा में राष्ट्रवादी चेतना का प्रसार किया। उस समय पत्रकारिता का स्वर साहित्यिक, नैतिक और सुधारवादी था। सामाजिक कुरीतियों, शिक्षा, नारी स्थिति और भारतीय अस्मिता जैसे मुद्दे प्रमुखता से उठाए गए।

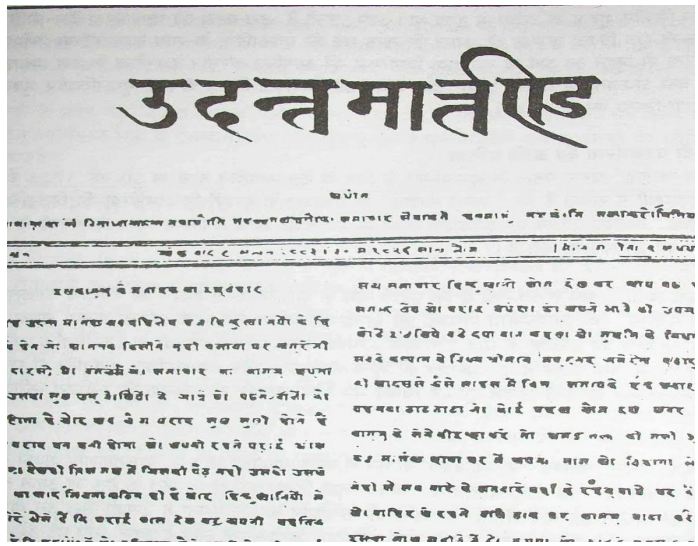
उदन्तमार्तण्ड

स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान हिंदी पत्रकारिता एक जनआंदोलन का स्वर बन गई। प्रताप (गणेश शंकर विद्यार्थी), अभ्युदय (पंडित मदन मोहन मालवीय), नवजीवन (महात्मा गांधी) इत्यादि पत्रों ने ब्रिटिश शासन की नीतियों की आलोचना की और जन-संगठन को दिशा दी। गणेश शंकर विद्यार्थी की पत्रकारिता को मानवीय पत्रकारिता का आदर्श माना जा सकता है, जहाँ सांप्रदायिक सद्भाव और सामाजिक न्याय को प्राथमिकता दी गई। यह दौर हिंदी पत्रकारिता के नैतिक साहस का स्वर्णकाल माना जाता है। पत्रकारिता के इसी काल को हम सभी मिशन की पत्रकारिता के रूप में जानते हैं।

स्वतंत्रता के बाद हिंदी पत्रकारिता के समक्ष नई चुनौतियाँ थीं- लोकतंत्र को सुदृढ़ करना, विकास को जनोन्मुख बनाना और सत्ता के समक्ष वाचडॉग की भूमिका में रहना। इस काल में नवभारत टाइम्स, हिंदुस्तान, जनसत्ता, धर्मयुग और साप्ताहिक हिंदुस्तान जैसे पत्र-पत्रिकाओं ने राजनीतिक चेतना के साथ-साथ साहित्य, संस्कृति और समाज को भी स्थान दिया। इस दौर में हिंदी पत्रकारिता ने जनपक्षधरता को बनाए रखते हुए राष्ट्र-निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, हालाँकि इसी दौरान व्यावसायिक दबाव भी धीरे-धीरे बढ़ रहे थे।

स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान भारतीय पत्रकारिता जिस **मिशनरी चेतना** से संचालित थी, वह पत्रकारिता के श्वेत पक्ष का उत्कृष्ट उदहारण प्रस्तुत करती है। किंतु 25 जून, 1975 को घोषित आपातकाल के साथ ही भारतीय पत्रकारिता एक नए चरण - **'परमिशन के दौर'** - में प्रवेश करती है। इस अवधि में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता निलंबित कर दी गई और प्रेस पर कठोर सेंसरशिप लागू हुई।

आपातकाल के दौरान समाचार-पत्रों को प्रकाशन से पूर्व सरकारी अनुमति लेना अनिवार्य हो गया। आलोचनात्मक समाचार, संपादकीय और राजनीतिक असहमति को रोका गया या परिवर्तित किया गया। इस प्रकार पत्रकारिता का मूल प्रश्न- सच क्या है-से बदलकर क्या छापने की अनुमति है-हो गया। संपादकीय स्वायत्तता लगभग समाप्त हो गई और आत्म-सेंसरशिप एक सामान्य प्रवृत्ति बन गई।

यह दौर भारतीय पत्रकारिता के इतिहास में एक चेतावनी के रूप में दर्ज है, जिसने यह स्पष्ट किया कि लोकतंत्र में प्रेस की स्वतंत्रता सतत संरक्षण और प्रतिरोध की माँग करती है। आपातकाल ने मिशनरी पत्रकारिता को यह सिखाया कि बिना संस्थागत स्वतंत्रता के उसका नैतिक साहस भी असुरक्षित हो सकता है।

आपातकाल के दौरान पत्रकारिता ने जिस 'परमिशन के दौर' को झेला, उसके बाद भारत में आर्थिक उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण के साथ पत्रकारिता एक व्यावसायिक पेशे के रूप में उभरती है। इस दौर में मीडिया पर राज्य का सीधा नियंत्रण कम हुआ और बाजार की भूमिका निर्णायक हो गई।

उदारीकरण के बाद समाचार-पत्र और चैनल संस्थागत रूप से अधिक संगठित हुए। प्रबंधन, मार्केटिंग, टीआरपी, सर्कुलेशन

और विज्ञापन पत्रकारिता के अनिवार्य घटक बने। पत्रकारिता में कौशल, गति, तकनीकी दक्षता और प्रस्तुति को प्राथमिकता मिली। न्यूज़रूम आधुनिक हुए और पत्रकार एक मिशनरी कार्यकर्ता से अधिक प्रोफेशनल कम्युनिकेशन वर्कर के रूप में स्थापित हुआ।

हालांकि इस व्यावसायिकता ने पत्रकारिता को आर्थिक आत्मनिर्भरता और व्यापक पहुंच दी, लेकिन इसके साथ ही विचार, वैचारिक हस्तक्षेप और जनपक्षधरता धीरे-धीरे कमजोर पड़ी। संपादक की भूमिका सीमित हुई और निर्णय प्रक्रिया में प्रबंधन का वर्चस्व बढ़ा। इस प्रकार उदारीकरण का दौर पत्रकारिता को अनुमति के भय से तो मुक्त करता है, लेकिन उसे बाजार की शर्तों में बांध देता है-जहाँ स्वतंत्रता है, पर उसकी कीमत भी है।

मिशन, परमिशन, प्रोफेशनलिज़्म और कमीशन जैसे विभिन्न दौरों से गुजरते हुए भारतीय पत्रकारिता ने अनेक चुनौतियाँ झेली हैं। सत्ता का दबाव, बाज़ार का वर्चस्व, तकनीकी परिवर्तन और वैचारिक संकुचन ने पत्रकारिता के स्वरूप को बार-बार प्रभावित किया है। इसके बावजूद यह कहना उचित नहीं होगा कि पत्रकारिता निष्क्रिय या पूरी तरह दिशाहीन हो गई है। आज के दौर में जब डिजिटल माध्यमों का विस्तार हुआ है तो सूचनाएं एक क्लिक की दूरी पर ही है। किंतु उस एक क्लिक की दूरी का फायदा कई बार पत्रकार और मीडिया संस्थान या फिर नवोदित यूट्यूबर्स आदि गलत थंबनेल के जरिए उठाते हैं। यही कारण है कि पत्रकारिता पर तमाम सवालों के बीच एक विश्वसनीयता का प्रश्न भी उठा है। इस प्रश्न को हल करने के लिए भी यह जरूरी है कि भले ही सूचना देर से मिले, किंतु सटीक मिले। नाटकीयता या सनसनीखेज भाव भले कम हो, किंतु संवेदनशीलता कहीं कम ना रहे। हम जिस दौर की पत्रकारिता को आज आदर्श के रूप में देखते हैं, उसमें भी ऐसी ही स्थिति थी। कही हर बात जाती थी, बस उसे कहने और लिखने का सलीका था। उस विश्वसनीयता को हासिल करने के लिए यह जरूरी है कि मीडिया संस्थान अपनी ब्रांड वैल्यू विश्वसनीयता के साथ बढ़ाएं। व्यूज, क्लिक्स या फिर रीडरशिप ही इसका एकमात्र मानक नहीं हो सकते। इतिहास साक्षी है कि हर कठिन दौर में पत्रकारिता ने स्वयं को नए रूप में पुनर्गठित किया है और समाज के प्रति अपनी मूल ज़िम्मेदारी को पूरी तरह छोड़ा नहीं है।

‘मिशन, परमिशन, प्रोफेशनलिज़्म और कमीशन जैसे विभिन्न दौरों से गुजरते हुए भारतीय पत्रकारिता ने अनेक चुनौतियाँ झेली हैं। सत्ता का दबाव, बाज़ार का वर्चस्व, तकनीकी परिवर्तन और वैचारिक संकुचन ने पत्रकारिता के स्वरूप को बार-बार प्रभावित किया है।’

आज भले ही विचार की जगह सीमित होती दिखे और जनपक्षधरता पर प्रश्नचिह्न लगे हों, फिर भी वैकल्पिक मीडिया, स्वतंत्र डिजिटल प्लेटफॉर्म, जमीनी रिपोर्टिंग और संवेदनशील पत्रकारों के प्रयास यह संकेत देते हैं कि आशा अभी शेष है। पत्रकारिता का मूल स्वभाव संवाद, सत्य और जनहित से जुड़ा हुआ है, जिसे पूरी तरह समाप्त नहीं किया जा सकता। यही नहीं इस दौर में तो सोशल मीडिया के तमाम माध्यम हर किसी से एक क्लिक की दूरी पर हैं। यदि आप सामाजिक सरोकारों के प्रति

सजग हैं तो इन माध्यमों के माध्यम से अपना स्वर बुलंद कर सकते हैं। कई ऐसे भी प्रसंग आते ही रहे हैं, जब भले ही मुख्यधारा के मीडिया में किसी विषय को स्थान न मिला हो, लेकिन जब सोशल मीडिया में उसकी चर्चा तेज हुई तो फिर अंत में टीवी, अखबार और डिजिटल मीडिया में भी उन्हें कवरेज मिली। इस प्रकार वर्तमान दौर में पत्रकारिता का लोकतांत्रीकरण होता दिखा है। बस यह ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है कि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता कुछ भी कहने या लिखने की स्वच्छंदता ना बने। यदि इन मूल्यों और कर्तव्यों का ध्यान रखा जाए और पत्रकारिता की मूल विचारधारा वही रहे, जो हमें विरासत में मिली है तो पहले से भी कहीं अधिक प्रभाव छोड़ा जा सकता है। दुनिया के कई देशों में ऐसा हुआ भी है।

जमीनी पत्रकारिता, पर्यावरणीय रिपोर्टिंग, श्रम, जनजाति और हाशिए के समुदायों से जुड़े मुद्दों पर हो रहा कार्य यह संकेत देता है कि पत्रकारिता का विवेक अभी जीवित है। अनेक युवा पत्रकार जोखिम उठाकर दूरदराज़ के इलाकों से रिपोर्टिंग कर रहे हैं, जहाँ मुख्यधारा मीडिया की पहुँच सीमित है। ऐसे प्रयास यह विश्वास जगाते हैं कि पत्रकारिता पूरी तरह बाज़ार में समाहित नहीं हुई है। यदि इन प्रयोगों को पाठकों का सक्रिय समर्थन और संस्थागत संरक्षण मिले, तो भारतीय पत्रकारिता एक बार फिर मिशनरी चेतना और जनपक्षधर दृष्टि की ओर अग्रसर हो सकती है। यही इसकी ऐतिहासिक ज़िम्मेदारी भी है और भविष्य की संभावना भी।

इसलिए यह समय निराशावाद का नहीं, बल्कि आत्ममंथन और पुनर्संयोजन का है। यदि पाठक, पत्रकार और संस्थान मिलकर मूल्यों की पुनर्प्रतिष्ठा का प्रयास करें, तो पत्रकारिता एक बार फिर जनपक्षधरता, संवेदना और लोकतांत्रिक चेतना की ओर लौट सकती है। यही द्विशताब्दी का सच्चा सम्मान होगा रघुवीर सहाय, धर्मवीर भारती, प्रभाष जोशी, राजेंद्र माथुर, सुरेंद्र प्रताप सिंह जैसे संपादकों की परंपरा को आगे बढ़ाने के लिए आज पत्रकारिता को सत्ता की नहीं, अपितु पाठकों के संरक्षण की आवश्यकता है। पत्रकारिता रुकी नहीं है-वह बदलाव के बीच अपना रास्ता तलाश रही है।

राष्ट्रीय सहारा का 34 साल का सफर अचानक थमा, पत्रकारों को 'हस्तक्षेप' की आस

भारत में अखबारी पत्रकारिता के लिए चुनौतीपूर्ण समय में राष्ट्रीय सहारा अखबार का प्रकाशन बंद हो गया है। कभी अपने 'हस्तक्षेप' जैसे विशेषांकों के लिए मशहूर रहे इस अखबार के अचानक ही बंद होने से सैकड़ों पत्रकार सड़क पर आ गए। आज हालात यह हैं कि बेरोजगार हुए पत्रकारों को लेबर कोर्ट से लेकर अखबार के मालिकों तक से 'हस्तक्षेप' की आस है। इस प्रकार कभी सहारा में लेखनी से दुनियावी मामलों में हस्तक्षेप करने वाले पत्रकार आज अपने ही विषय में किसी हस्तक्षेप के मोहताज हैं। 1992 से अब तक यानी 34 सालों के सफर में राष्ट्रीय सहारा ने कई महत्वपूर्ण अंकों का प्रकाशन किया। उसकी कई खबरें चर्चा का विषय बनीं तो कई समाचारों ने कोलाहल मचा दिया था। किंतु सहारा समूह की आर्थिक बदहाली की काली छाया से यह अखबार भी बच नहीं सका। वर्षों से यहां कार्यरत पत्रकारों को वेतन देरी से मिल रहा था। फिर भी अपने पत्रकारीय धर्म को समझते हुए लोग यहां निरंतरता से काम कर रहे थे। अंत में अखबार को अचानक ही बंद किए जाने से बड़ा झटका लगा है। कई पत्रकारों ने बीते साल से ही काम करना बंद कर दिया था क्योंकि सैलरी नहीं मिल रही थी और आजीविका पर संकट होने के चलते परिवार चलाना भी मुश्किल हो रहा था। अंत में 9 जनवरी को अखबार के प्रबंधन ने अचानक ही ऐलान कर दिया कि आज से समाचार पत्र का प्रकाशन बंद किया जाता है। इस सूचना ने उम्मीदों के वे जुगनू बुझा दिए, जो सालों से जल रहे थे कि शायद राष्ट्रीय सहारा अखबार को कोई सहारा मिलेगा और वह फिर से पुरानी रौनक हासिल कर पाएगा।

अखबार के सभी संस्करणों का प्रकाशन ठप कर दिया गया है। राष्ट्रीय सहारा अखबार कुल सात यूनिटों से प्रकाशित होता था। इसमें नई दिल्ली, देहरादून, लखनऊ, कानपुर, वाराणसी, गोरखपुर और पटना यूनिट से यूपी, बिहार, झारखंड, उत्तराखंड, दिल्ली, पंजाब, हरियाणा, भोपाल, छत्तीसगढ़ और राजस्थान के कुल 56 संस्करण प्रकाशित होते थे। इसमें दिल्ली यूनिट से करीब 4 माह से प्रकाशन ठप था और अन्य यूनिटों में प्रकाशन जारी था। लेकिन बृहस्पतिवार की शाम को राष्ट्रीय सहारा के सभी यूनिटों के यूनिट हेड और प्रबंधकों ने अपने अपने यूनिट के मीडिया कर्मियों को बताया कि मीडिया हेड सुमित राय का मौखिक निर्देश आया है कि आज से सभी यूनिटों में अखबार का प्रकाशन नहीं होगा।

प्रबंधकों ने कहा कि मीडिया हेड सुमित राय को जयब्रत राय की तरफ से लगातार निर्देश दिया जा रहा था कि कर्मचारियों की छंटनी करें और अखबार का प्रकाशन तत्काल बंद करायें। संभवत: इसी आधार पर सभी संस्करणों का प्रकाशन अगले आदेश तक बंद किया जा रहा है। अखबार बंदी की सूचना पाकर राष्ट्रीय सहारा गोरखपुर यूनिट के सभी कर्मचारी वहां डीएलसी कार्यालय पर शिकायत लेकर पहुंच गए। मीडिया कर्मियों ने डीएलसी से कहा कि बिना पूरा भुगतान किये और निर्धारित अवधि के नोटिस के अखबार का प्रकाशन आज से बंद कर दिया गया है और सभी कर्मचारियों को तत्काल त्यागपत्र देने का निर्देश दिया गया है। यह पूरी तरह से न्याय के प्रतिकूल और गलत है। इस पर हमें न्याय दिलाया जाए। इस पर डीएलसी ने तत्काल सहारा अखबार के गोरखपुर यूनिट के प्रबंधक पीयूष बंका को तलब किया और तत्काल उचित और नियम के अनुसार कार्रवाई करने का निर्देश दिया।

अखबार बंदी की सूचना पर पटना यूनिट में भी सभी मीडियाकर्मी इकट्ठा हुए और 9 जनवरी को डीएलसी ऑफिस में लिखित शिकायत करने का निश्चय किया। इसी तरह राष्ट्रीय सहारा के लखनऊ यूनिट में भी शाम को सभी अखबार कर्मी इकट्ठा हुए और उन्हें संपादक बृजेश मिश्रा की तरफ से बताया गया कि यूनिट हेड अजित बाजपेयी ने निर्देश दिया है कि आज से अखबार का प्रकाशन नहीं होगा। इसके बाद अखबार कर्मियों ने ऑफिस में बैठक की और फिर 9 जनवरी को डीएलसी कार्यालय में पहुंचकर लिखित शिकायत दर्ज करने का संकल्प लिया। नोएडा, लखनऊ, गाजियाबाद समेत तमाम शहरों में मैनेजमेंट के इस फैसले से कार्यरत पत्रकारों में मायूसी छा गई।

राष्ट्रीय सहारा का बंद होना 21वीं सदी में हिंदी पत्रकारिता के इतिहास के एक हिस्से के पटाक्षेप जैसा है। इस घटनाक्रम ने हिंदी अखबारों के वित्तीय मॉडल पर भी प्रश्न खड़े किए हैं। संपादकीय उत्तरदायित्व भले ही पत्रकार पूरी गरिमा से निभा लें, किंतु आज भी प्रकाशन के लिए लगने वाली आर्थिक लागत निकाल पाना मुश्किल होता है। राष्ट्रीय सहारा के मामले में भी ऐसा ही दिखा कि जब कंपनी आर्थिक संकट में घिरी तो कोई विकल्प नहीं बचा और पत्रकारों के समक्ष निरंतर लगन से काम करने के बाद भी बेरोजगार हो जाने के अलावा कोई रास्ता ना रहा।

बांग्लादेश में दो बड़े मीडिया संस्थानों पर हमले, पत्रकारों-संपादकों ने सरकार से मांगी सुरक्षा

बांग्लादेश में मीडिया संस्थानों और पत्रकारों पर हमले लगातार जारी हैं। हाल ही में हुए हिंसक हमलों के बाद पत्रकारों, संपादकों और मीडिया संस्थानों के मालिकों ने एक महत्त्वपूर्ण बैठक की। इस बैठक में इन्होंने सरकार से भी सुरक्षा की मांग की है। ये हमले देश के दो प्रमुख राष्ट्रीय समाचार पत्रों के दफ्तरों पर भीड़ द्वारा किए गए थे। बैठक में शामिल हुए पत्रकारों-संपादकों ने कहा कि दक्षिण एशियाई देश में नोबेल शांति पुरस्कार विजेता मोहम्मद यूनुस के नेतृत्व वाली अंतरिम सरकार के दौरान मीडिया उद्योग को व्यवस्थित रूप से निशाना बनाया जा रहा है। उन्होंने प्रशासन पर गंभीर आरोप लगाते हुए कहा कि देश के प्रमुख अंग्रेजी दैनिक 'डेली स्टार' और सबसे बड़े बांग्ला अखबार 'प्रथम आलो' पर हुए हमलों को रोकने में विफल रहा।

जबकि ये दोनों ही समाचार पत्र देश की राजधानी ढाका में स्थित हैं। हालांकि यह अभी तक साफ नहीं है कि प्रदर्शनकारियों ने इन अखबारों पर हमला क्यों किया। इनके संपादकों को यूनुस का करीबी माना जाता है। हालांकि, पिछले कुछ महीनों से इस्लामी समूह इन अखबारों के दफ्तरों के बाहर विरोध कर रहे थे और उन पर भारत से संबंध होने का आरोप लगा रहे थे। एडिटर्स काउंसिल और अखबार मालिकों ने बैठक के बाद मांग की है कि फरवरी में होने वाले चुनावों से पहले सरकार स्वतंत्र प्रेस की सुरक्षा सुनिश्चित करे। काउंसिल के अध्यक्ष नूरुल कबीर ने कहा कि मीडिया और लोकतांत्रिक संस्थाओं को चुप कराने की कोशिशें एक खतरनाक संकेत हैं। उन्होंने पत्रकारों से एकजुट रहने की अपील की।

नाम में 'धुरंधर' और कमाई में भी, पाकिस्तान समेत 7 मुस्लिमों देशों का बैन भी रहा बेअसर

धुरंधर फिल्म हिंदी सिनेमा के इतिहास में सबसे ज्यादा कमाई करने वाली फिल्म बन गई है। कोई भी बॉलीवुड फिल्म बॉक्स ऑफिस पर अब तक इतनी कमाई नहीं कर सकी। भारत में ही नहीं, बल्कि विदेश में भी धुरंधर ने सफलता के झंडे गाड़े हैं। मूवी का वर्ल्डवाइड कलेक्शन 1340 करोड़ से अधिक हो गया है। सैकनिल्क के मुताबिक, 50 दिनों में भारत में फिल्म की कुल कमाई 831.09 करोड़ रुपए तक पहुंच चुकी है। 'धुरंधर' के कलेक्शन की बात करें तो फिल्म ने बॉक्स ऑफिस पर अपनी शुरुआत 28 करोड़ रुपए के साथ की थी। इसके बाद पहले हफ्ते में फिल्म ने 207.25 करोड़ रुपए का कलेक्शन किया। दूसरे हफ्ते में फिल्म की कमाई और भी बढ़ गई और कलेक्शन 253.25 करोड़ रुपए पर पहुंच गया। 30 जनवरी को नेटफ्लिक्स पर रिलीज होते ही 'धुरंधर' ने ओटीटी पर भी धूम मचा दी। फिल्म ने 24 घंटे के अंदर 7.6 मिलियन व्यूज हासिल कर एक नया रिकॉर्ड बनाया और 'एनिमल' को पीछे छोड़ दिया।

सिर्फ भारतीय बॉक्स ऑफिस पर ही नहीं, वर्ल्डवाइड भी फिल्म अच्छी कमाई कर रही है। 50 दिनों में फिल्म का वर्ल्डवाइड कलेक्शन 1340 करोड़ रुपए तक पहुंच चुका है। हालांकि मेकर्स का दावा इससे अधिक का है। धुरंधर को आदित्य धर ने डायरेक्ट किया है और इसमें रणवीर सिंह मुख्य भूमिका में हैं। यह एक स्पाई थ्रिलर फिल्म है, जो भारतीय खुफिया एजेंसी से जुड़ी कहानी दिखाती है। वहीं, फिल्म को यूएई, सऊदी अरब, कतर, बहरीन, कुवैत और ओमान जैसे 6 खाड़ी देशों में बैन किया गया है। इसकी वजह फिल्म की कहानी, पाकिस्तान से जुड़ा एंगल और कुछ सीन बताए जा रहे हैं।

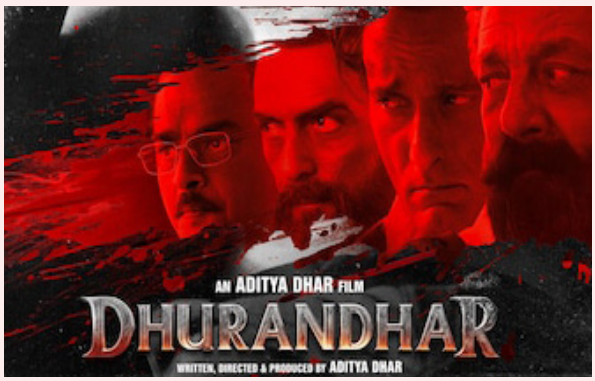

हालांकि बैन के बावजूद पाकिस्तान के लोगों में धुरंधर फिल्म को देखने की दिवानगी देखने को मिली। पाकिस्तान में केवल दो हफ्तों के भीतर इस फिल्म के कम से कम 20 लाख अवैध डाउनलोड होने की सूचना मिली है। इस तरह यह फिल्म पाकिस्तान में सबसे अधिक पाइरेट की गई फिल्म बन गई है और इसने रईस जैसी फिल्मों को भी पीछे छोड़ दिया है। पाकिस्तान में लगे प्रतिबंध के कारण फिल्म निर्माताओं को लगभग 50-60 करोड़ रुपये का नुकसान होने की संभावना है, लेकिन इसके बावजूद फिल्म का संदेश पूरे पाकिस्तान में पहुंच गया है। फिल्म में रणवीर सिंह के साथ अक्षय खन्ना, अर्जुन रामपाल, संजय दत्त, आर माधवन और सारा अर्जुन भी प्रमुख भूमिकाओं में नजर आए हैं। फिल्म सच्ची घटनाओं से प्रेरित है। हालांकि इसमें काफी क्रिएटिव लिबर्टी भी ली गई है।

पंजाब केसरी अखबार की प्रिंटिंग प्रेस में की छापेमारी, कर्मचारियों से मारपीट और हिरासत में लेने के आरोप

उत्तर भारत के बड़े मीडिया ग्रुप 'पंजाब केसरी' ने पंजाब की भगवंत मान सरकार पर लोकतंत्र के चौथे स्तंभ मीडिया पर हमला करने के गंभीर आरोप लगाए हैं। इस संबंध में पंजाब केसरी प्रबंधकों ने स्थिति की जानकारी लिखित रूप में पंजाब के राज्यपाल गुलाब चंद कटारिया और मुख्यमंत्री भगवंत मान को भेजी है। पंजाब केसरी ने आरोप लगाए हैं कि पिछले कुछ दिनों से पंजाब केसरी समूह की आवाज दबाने के लिए उनकी प्रेस और अन्य संस्थाओं पर कार्रवाई की जा रही है। इसी क्रम में 16 जनवरी, 2025 को समूह की बठिंडा प्रिंटिंग प्रेस में रेड डाली गई, कुछ कर्मचारियों को पुलिस ने हिरासत में लिया और कुछ के साथ मारपीट कर उन्हें घायल कर दिया गया, जिन्हें सिविल अस्पताल बठिंडा में भर्ती कराया गया है।

इसी तरह, जालंधर स्थित सूरानुसी प्रिंटिंग प्रेस में प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के उच्च अधिकारी और कर्मचारी पुलिस बल के साथ जबरदस्ती अंदर घुसे और अखबार के कर्मचारियों के साथ मारपीट की। उच्च अधिकारियों ने पुलिस के साथ मिलकर अंदर के गेट का ताला तोड़ा, जबरदस्ती सैंपल भरे और एक व्यक्ति को हिरासत में ले गए। ये सभी अधिकारी बिना किसी नोटिस और सूचना के आए थे और कह रहे थे कि यह ऊपर से आदेश है।

'दि प्रिंट' की रिपोर्ट के अनुसार, मीडिया समूह का कहना है कि ये छापे आम आदमी पार्टी के राष्ट्रीय संयोजक अरविंद केजरीवाल से जुड़ी एक नकारात्मक खबर प्रकाशित करने के बदले में किए गए हैं। प्रकाशन समूह ने अब सरकार द्वारा "डराने-धमकाने" की शिकायत राज्यपाल से की है। हालांकि आम आदमी पार्टी की सरकार ने एक आधिकारिक बयान में छापेमारी का बचाव करते हुए कहा कि पंजाब केसरी समूह अखबार चलाने की आड़ में खाद्य, आबकारी और प्रदूषण से जुड़े कई कानूनों का उल्लंघन कर रहा था, और उनके खिलाफ की गई कार्रवाई का पत्रकारिता से कोई संबंध नहीं है। पंजाब केसरी मीडिया समूह पर भगवंत मान सरकार की इस कार्रवाई पर देश के बड़े पत्रकारों एवं राजनेताओं ने विरोध जताया है। दिव्य हिमाचल समाचार पत्र ने 'लफ्ज़ घायल नहीं होंगे' शीर्षक से लिखे अग्रलेख में इस कार्रवाई की कड़ी आलोचना की है।

ग्रोक एआई से अश्लील कंटेंट बनाने पर एक्स ने लगाई रोक

विवादों में घिरे सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म एक्स ने एक बड़ा एक्शन लिया है। कंपनी ने ग्रोक एआई के जरिए अश्लील कंटेंट बनाने पर रोक लगा दी है। एलन मस्क की कंपनी ने यह कदम सरकार की सख्ती के बाद उठाया है। वहीं, एक्स ने अपने एआई टूल ग्रोक पर बनाए जा रहे अश्लील और अवैध कंटेंट को अपने सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म से हटाने का भी निर्णय लिया है। अश्लील सामग्री पर भारत सरकार की चेतावनी के बाद अमेरिका के दिग्गज कारोबारी एलन मस्क के स्वामित्व वाली सोशल मीडिया कंपनी एक्स बैकफुट पर है।

दुनिया भर में एआई का उपयोग करके निजता के उल्लंघन पर गहरी चिंताएं जाहिर की जा रही हैं। हालात अनियंत्रित होता देखकर कई देशों में ग्रोक प्लेटफॉर्म को बैन करने का भी निर्णय लिया गया है। इंडोनेशिया-मलेशिया के बाद फिलीपींस सरकार ने ग्रोक की वेबसाइट को ब्लॉक कर दिया है। सरकार का आरोप है कि यह एआई लोगों की अश्लील और आपत्तिजनक तस्वीरें बना रहा था। फिलीपींस सरकार ने खासतौर पर बच्चों से जुड़े कंटेंट पर गहरी चिंता जताई है।

भारत में ग्रोक एआई को लेकर मिली शुरुआती शिकायतों के बाद भारत सरकार ने इस मामले में कड़ा रुख अपनाया था। इलेक्ट्रॉनिक्स और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय ने सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 और सूचना प्रौद्योगिकी नियम, 2021 के तहत वैधानिक उचित सावधानी दायित्वों का पालन नहीं करने के लिए एक्स कोर्प (पूर्व में ट्विटर) को सख्त नोटिस जारी किया था। सरकार ने एक्स कोर्प को 72 घंटों के भीतर कार्रवाई रिपोर्ट भेजने का आदेश दिया था, जिसमें अपनाए गए उपायों, मुख्य अनुपालन अधिकारी की भूमिका और भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 के तहत अनिवार्य रिपोर्टिंग के अनुपालन का विवरण प्रस्तुत करने को कहा गया था।